विषय-सूची



प्रस्तावना



ऐसा कोई विरला ही घर होगा, जो शिशुओं की चंचल चेष्टाओं और उनकी मृदु मुस्कान से आलोकित न होता हो; अथवा जो बालकों की निर्दोष नटखटी, उनके अनोखे उत्पात और कमनीय कलरव से गूंजता न हो। गृहस्थ जीवन की ये इतनी साधारण और छोटी बातें समझी जाती हैं कि हम लोग आँखें रहते हुए भी इन्हें भली भाँति नहीं देखते, तथा गार्हस्थिक सुख का उपभोग करते हुए भी इनके शाश्वत सुख का वास्तविक अनुभव नहीं करते! इन्हीं साधारण किंतु स्वाभाविक बातों को नेत्रहीन सूरदास ने अपनी अंतर्दृष्टि से भली भाँति देखा था, तथा गृहस्थ जीवन से विरक्त होते हुए भी अपने अंतस्तल में इनका सच्चा सुखानुभव किया था! इसी अंतर्दर्शन और आंतरिक अनुभूति के फल स्वरूप उन्होंने अपनी रचनाओं में श्री कृष्ण की बाल-लीलाओं के रूप में बाल - प्रकृति का जैसा मनोवैज्ञानिक, मर्मस्पर्शी और स्वाभाविक कथन किया है, वैसा उनसे पहले किसी कवि ने नहीं किया। उनको इस प्रकार के कथन की प्रेरणा किस प्रकार हुई, यह विचारणीय है।

विक्रम की १६ वीं शती के मध्य काल में महाप्रभु वल्लभाचार्य जी ने वैष्णव धर्म के अंतर्गत एक नवीन मत की स्थापना की थी। यह मत 'पुष्टि संप्रदाय' के नाम से प्रसिद्ध है और इसमें परब्रह्म श्रीकृष्ण की उपासना की जाती है। अपने उपास्य की आराधना के लिए वल्लभाचार्य जी ने दास्य, सख्य, वात्सल्य और माधुर्य सभी प्रकार के भक्ति-भावों का उपदेश दिया था, किंतु ठाकुर जी की सेवा के लिए उन्होंने बाल्य भाव को प्रधानता दी थी।

बालक के रूप में भगवान् की भक्ति करने वाला भक्त अपने अंतस्तल की समस्त पवित्र एवं उदात्त अनुभूतियों से अलौकिक वात्सल्य सुख का अनुभव करता है। उसे दास्य और सख्य भावों से भक्ति करने वालों की अपेक्षा भगवान् के अधिक सामीप्य का बोध होता है। इसके साथ ही अपने स्नेहास्पद के अबोध और अशक्त होने की भावना के कारण, उसे स्नेह के बदले में कोई वांछा भी नहीं होती। इसलिए बाल्य भक्ति में अहेतुक और निष्काम प्रेम अधिक होता है। वैसे भी भगवान् के विशुद्ध रूप की जैसी झाँकी अबोध बालक की निष्कपट, निष्कलंक और भोली-भाली मुद्रा में मिल सकती है, वैसी किसी अन्य रूप में नहीं। इसीलिए सांसारिक वासनाओं से मुक्ति और निरोधावस्था की शीघ्र प्राप्ति के लिए वल्लभाचार्य जी ने भगवान् श्री कृष्ण के विग्रह की बाल्य भाव से सेवा करने का उपदेश दिया था।

नंद, यशोदा और गोकुल की व्रजांगनाओं ने भगवान् श्री कृष्ण की आराधना वात्सल्य भाव से की थी। वात्सल्य भाव की वास्तविक अनुभूति मातृ हृदय में ही संभव है; अतः इस प्रकार की भक्ति करने वाले का मातृ हृदय होना आवश्यक है; चाहें वह स्त्री हो या पुरुष। इसलिए भक्त अपने को यशोदा की स्थिति में रख कर ही वात्सल्य भक्ति का सच्चा सुखानुभव कर सकते हैं। यशोदा ने प्रातःकाल से शयन पर्यंत श्री कृष्ण की वात्सल्य भाव से सेवा की थी। उसी भावना को व्यक्त करने के लिए वल्लभ संप्रदाय में ठाकुर जी की नित्य सेवा के निम्नलिखित आठ समय निर्धारित किये गये हैं—

१. मंगला,	२. शृंगार,	३. ग्वाल,	४. राजभोग
५. उत्थापन,	६. भोग,	७. संध्या आरती	८. शयन

उक्त आठों समय की झाँकियों में कीर्तन करने के लिए सूरदास और उनके सहयोगी अष्टछाप के अन्य कवि गण जो पद गाते थे, उनमें वात्सल्य भाव के पद स्वभावतया प्रचुर परिमाण में होते थे। इस प्रकार की उपलब्ध रचनाओं में सूरदास के पद संख्या और महत्व की दृष्टि से सर्वाधिक हैं। वार्ता से ज्ञात होता है कि जब वल्लभाचार्य जी ने सूरदास को भागवत का तत्व समझा कर उन्हें लीला-गायन का आदेश दिया, तब उन्होंने सर्व प्रथम श्री कृष्ण-जन्मोत्सव का सुविख्यात पद—व्रज भयौ महरि कैं पूत, जब यह बात सुनी†—गाया था*। इसके पश्चात् जब सूरदास वल्लभाचार्य जी के साथ गोघाट से गोकुल गये, तब भी उन्होंने नवनीत प्रिय जी के कीर्तन में बाल-लीला का ही प्रसिद्ध पद—सोभित कर नवनीत लिए‡—गाया था। वार्ता में लिखा है—

"सो यह पद सुनिकैं श्री आचार्य जी आप सूरदास के ऊपर बहौत प्रसन्न भये। सो ता पाछै सूरदास नें और हू पद बाललीला के श्री आचार्य जी कों सुनाये$।"

इससे ज्ञात होता है कि वल्लभाचार्य जी से दीक्षित होने के अनंतर उनके आदेशानुसार सूरदास ने श्री कृष्ण की बाल-लीला के पदों से ही अपने लीला-गायन का आरंभ किया था। इसके पश्चात् श्रीनाथ जी के मंदिर में सुदीर्घ काल तक कीर्तन करते हुए भी उन्होंने समय-समय पर बाल-लीला के अगणित पदों की रचना की थी। इससे यह समझा जा सकता है कि वल्लभाचार्य जी का आदेश,

---

† यह पद प्रस्तुत पुस्तक में पृष्ठ २ पर मुद्रित है।

* सूरदास की वार्ता (अग्रवाल प्रेस), पृ० १४-१५

‡ यह पद प्रस्तुत पुस्तक में पृष्ठ १६ पर मुद्रित है।

$ सूरदास की वार्ता (अग्रवाल प्रेस), पृ० १८

वल्लभ संप्रदाय की सेवा-विधि और भागवतोक्त ज्ञान से सूरदास को बाल-लीला के पदों की रचना करने की प्रेरणा मिली थी।

यद्यपि व्रजभाषा साहित्य का बाल्य वर्णन वल्लभ संप्रदाय की देन है, तथा सूरदास और उनके सहयोगियों को इस प्रकार के कथन की प्रेरणा वल्लभ संप्रदाय और श्रीमद्भागवत से ही हुई थी, तथापि इस प्रकार की अधिकांश रचना सूरदास की निजी उद्भावना पर आधारित एवं मौलिक है। श्रीमद्भावत-दशमस्कंध के कुछ अध्यायों में श्री कृष्ण की बाल-लीलाओं का संक्षिप्त वर्णन हुआ है। उसका वर्णन लीला मात्र है, जिसे वात्सल्य भाव की कोटि में रखा जा सकता है। सूरदास का बाल्य वर्णन अत्यंत विशद एवं सर्वांगपूर्ण है, अतः वह 'भाव' मात्र ही नहीं, वरन् 'रस' के समस्त लक्षणों से युक्त है। सूरदास की रचनाओं में वात्सल्य रस का जैसा प्रवाह उमड़ा है, वैसा श्रीमद्भागवत के बाल्य वर्णन में नहीं है। भागवत में जितना है, संस्कृत साहित्य के अन्य पुराण, काव्य और नाटकों में उतना भी नहीं है।

सूरदास से पहले 'वात्सल्य' की प्रतिष्ठा 'रस' के रूप में पूर्णतया नहीं हो सकी थी। साहित्य शास्त्र के आचार्यों ने उसे 'भाव' ही माना था। 'साहित्य-दर्पण' आदि में उसके 'रस' होने की संभावना पर विचार किया गया, किंतु तब तक के साहित्य में उसका सर्वांगीण विकास नहीं हुआ था। वैष्णव धर्म के पुनुरुत्थान के साथ-साथ जब धार्मिक क्षेत्र में भक्ति के विविध रूपों का विवेचन हुआ, तब वात्सल्य भक्ति पर भी बल दिया जाने लगा। 'नारद-भक्ति-सूत्र' में वर्णित भक्ति की ११ आसक्तियों में और श्रीमद्भागवत की नवधा भक्ति में 'वात्सल्य' का भी नामोल्लेख हुआ है। सूरदास की रचनाओं में 'वात्सल्य रस' का सर्व प्रथम सर्वांगपूर्ण वर्णन किया गया। इसका यह प्रभाव हुआ कि उनके समकालीन भक्ति शास्त्र के प्रमुख आचार्य श्री रूप गोस्वामी ने 'हरि-भक्ति-रसामृत-सिंधु' में वात्सल्य भक्ति का 'रस' रूप से भी विवेचन किया। इसके पश्चात् भक्ति-साहित्य में वात्सल्य का सांगोपांग कथन होने के कारण उसे 'रस' रूप देने में कोई संदेह नहीं रहा। इस प्रकार सूरदास की रचनाओं द्वारा बाल्य वर्णन की एक सर्वांगपूर्ण एवं शक्तिशाली परंपरा का निर्माण हुआ।

सूरदास ने हिंदी साहित्य में बाल्य वर्णन की परंपरा ही नहीं डाली, वरन् वे इस विषय के सर्वश्रेष्ठ कवि भी माने गये हैं। सूर-साहित्य के आलोचकों की दृष्टि में उनके बाल्य वर्णन का महत्व संसार के किसी भी कवि की तद्विषयक सर्वश्रेष्ठ रचना से किसी प्रकार कम नहीं है! हमारे देश का यह सौभाग्य है कि इसमें सूरदास जैसे विश्ववंद्य कवि हुए और हिंदी साहित्य का यह गौरव है कि इसमें बालकृष्ण-पदावली के रूप में सूरदास का अमर काव्य विद्यमान है।

खेद की बात है कि इस प्रकार की रचनाओं का सुसंपादित संकलन अभी तक हिंदी साहित्य में प्रकाशित नहीं हुआ था। सूरदास कृत बाल-लीला के पद सूरसागर दशमस्कंध में अथवा कीर्तन-संग्रहों में उपलब्ध हैं, किंतु वहाँ पर उनके साथ अन्य विषयों के पद भी मिले हुए हैं। सूरदास की रचनाओं के जो संक्षिप्त संकलन निकले हैं, उनमें बाल-लीलाओं के बहुत थोड़े पद हैं और वे भी अन्य विषयों के पदों के साथ संकलित किये गये हैं। केवल बाल-लीलाओं के ही विशद और सुसंपादित संकलन की हिंदी साहित्य में अत्यंत आवश्यकता थी। इसी आवश्यकता की पूर्ति के विचार से यह पुस्तक प्रस्तुत की गई है।

सूरदास के समस्त पद कीर्तन के लिए रचित होने के कारण मूल रूप में मुक्तक हैं, अतः इनमें कथा-वस्तु के क्रमबद्ध वर्णन की चेष्टा नहीं की गई है। जहाँ तक श्रीकृष्ण की बाल-लीला के पदों का संबंध है, इनकी रचना भी मुक्तक है; किंतु यह विषय सूरदास के लिए अत्यंत प्रिय था और उन्होंने इसके भिन्न-भिन्न प्रसंगों का भिन्न-भिन्न अवसरों पर इतना विशद वर्णन किया है, कि इस संबंध के पद श्री कृष्ण की विभिन्न बाल-लीलाओं के क्रम से भी संकलित कर लिये गये हैं। इस प्रकार का संकलन सूरसागर का स्कंधात्मक संस्करण है, जिसके दशमस्कंध में बाल-लीला के पद उपलब्ध हैं। वहाँ पर इन पदों को कथा-क्रम से रखने की चेष्टा की गई है। सूरदास को बाल-लीला के भी जो प्रसंग अत्यंत प्रिय थे, उनका वर्णन उन्होंने विशद रूप में बार-बार किया है। जो विषय उनको कम प्रिय थे, उनका उन्होंने कम वर्णन किया है और जो विषय उनकी रुचि के नहीं थे, उनको छोड़ भी दिया है। इस प्रकार कई कथाओं की बार-बार आवृत्तियाँ हुई हैं, जिनके पद कई स्थानों में बिखरे हुए हैं। दो-एक विषयों का संक्षिप्त अथवा बिलकुल ही वर्णन नहीं हुआ है। इन कारणों से सूरसागर में कथा-क्रम का निर्वाह सर्वत्र एक ही रूप में नहीं हो पाया है।

प्रस्तुत पुस्तक के बाल संबंधी पद यद्यपि सूरसागर-दशमस्कंध से संकलित किये गये हैं, तथापि इनका क्रम सूरसागर के किसी भी हस्तलिखित अथवा मुद्रित संस्करण के अनुसार नहीं है। इस संकलन में इस बात की चेष्टा की गई है कि विभिन्न स्थानों में बिखरे हुए एक विषय के पद एक ही स्थान पर आ जावें। इस तरह के उलट-फेर से सूरसागर और इस पुस्तक के पदों की क्रम संख्या में दस-बीस पदों का अंतर तो सर्वत्र है, किंतु कहीं-कहीं पर सैकड़ों पदों का अंतर हो गया है। इस प्रकार संकलन में पर्याप्त परिश्रम करना पड़ा है। संकलित पदों को भी कथा-क्रम के अनुसार इस प्रकार सजाया गया है कि इनके पढ़ने में प्रबंध काव्य का सा आनंद आता है। यदि कहीं पर कथा का प्रवाह कुछ रुकता हुआ दिखाई देता है, तो इसका कारण उक्त प्रसंग के अनुकूल सूरदास के उत्तम पदों का अनुपलब्ध होना ही है।

सूरदास ने कई कथाओं का वर्णन बार-बार विविध रीति से किया है, इसलिए उनसे संबंधित पद प्रचुर संख्या में कई स्थानों पर उपलब्ध होते हैं। इनमें कभी-कभी पुनरुक्ति का सा आभास होता है। इस पुस्तक में इस प्रकार के समस्त पदों को न लेकर उस विषय के सर्वोत्तम पद ही लिये गये हैं और उनमें भी पुनरुक्ति के बचाने की चेष्टा की गई है। किंतु ऐसा सर्वत्र नहीं हो पाया है। इसका एक कारण पदों का क्रमबद्ध कथन होने की अपेक्षा उनका प्रत्येक प्रसंग के अनुकूल मुक्तक रूप में कथित होना है, और दूसरा कारण उनके रचने की सूरदास की अपनी शैली है, जिसके अनुसार वे एक विषय का वर्णन एक सीमा तक कर, आगे के पदों में उससे आगे का वर्णन नहीं करते, बल्कि आरंभ से ही करने लगते हैं।

सूरदास के बाल कृष्ण परब्रह्म हैं, जिन्होंने भक्तों को आनंद देने के अतिरिक्त दुष्टों के संहार के लिए भी अवतार लिया था। इसलिए सूरदास ने जहाँ लौकिक बालक के समान उनकी स्वाभाविक बाल-चेष्टाओं का कथन किया है; वहाँ पूतना, तृणावर्त्त, शकट, काग, धेनुक, वत्स आदि राक्षसों की कथाओं में उनके दैवी और अवतारी रूप का भी वर्णन किया है। सूरदास के बाल कृष्ण का यथार्थ रूप जानने के लिए दोनों प्रकार के वर्णनों से संबंधित पदों का देना आवश्यक था; किंतु द्वितीय प्रकार के वर्णनों में उनके अवतारी रूप का ही महत्व है, उनमें बाल-स्वभाव की कोई विशेषता नहीं है। ऐसे चमत्कारिक कथनों के ऐश्वर्य-बोध से बाल्य वर्णन के स्वाभाविक प्रवाह में बाधा उपस्थित होती है; जिसके कारण वात्सल्य रस की पूर्णतया निष्पत्ति नहीं हो पाती। इसी कारण इस पुस्तक में इन कथाओं से संबंधित पद न देकर शुद्ध बाल्य वर्णन के ही पद दिये गये हैं।

यमलार्जुन-उद्धार की कथा में भी श्रीकृष्ण के अवतारी रूप का महत्व है; किंतु इससे संबंधित पद इस पुस्तक में इसलिए देने पड़े हैं कि इनका संबंध माखन-चोरी, गोपियों का यशोदा से उराहना और यशोदा के रोष से है। इन विषयों में श्री कृष्ण की चंचलतापूर्ण बाल-प्रकृति का स्वाभाविक वर्णन हुआ है, जिनसे संबंधित पद इस पुस्तक में प्रचुर संख्या में संगृहीत हैं। सूरदास के अनेक पद ऐसे हैं, जिनके आरंभ में शुद्ध वात्सल्य का वर्णन है, किंतु अंत में श्रीकृष्ण के दैवी रूप का भी संकेत कर दिया गया है। इस प्रकार के कुछ पद इस पुस्तक में भी संकलित हैं, जिनका छोड़ना सूरदास के बाल्य वर्णन की विशिष्ट शैली के अनुसार संभव नहीं था।

इस पुस्तक में श्री कृष्ण की गो-चारण तक की बाल-लीलाओं के पद संकलित किये गये हैं। उस समय तक वे केवल ६-७ वर्ष के बालक थे, अतः इस पुस्तक के पद उनके शैशव और बाल्य काल की मनोरम लीलाओं से संबंधित हैं। इस प्रकार के कुल पद सूरसागर-दशमस्कंध में प्रायः ७०० हैं, जिनमें से शुद्ध बाल्य वर्णन के ३००

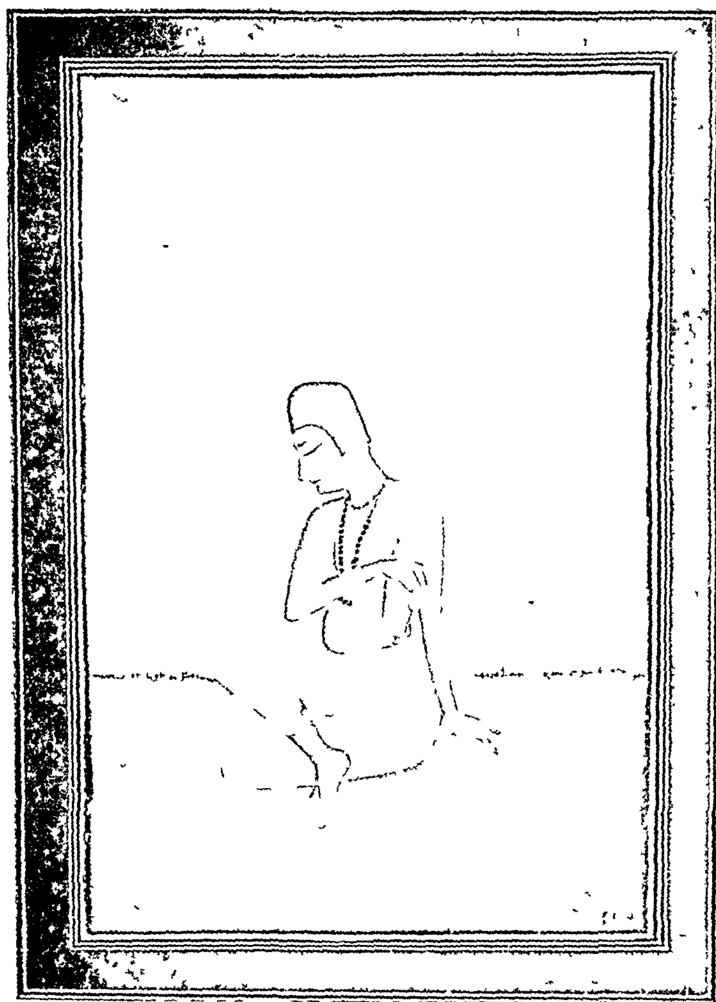
छूटे-छुटाए पदों का संकलन इस पुस्तक में किया गया है। संकलित पद साहित्य-सौन्दर्य और वर्णन-विस्तार की दृष्टि से इतने पूर्ण हैं कि छूटे हुए पदों के कारण इनके महत्व में कोई कमी नहीं आई है, वलिक व्यर्थ विस्तार के अभाव में इनमें का प्रत्येक पद अपना विशिष्ट महत्व रखता है'। पुस्तक के अंत में परिशिष्ट के अंतर्गत बाल्य वर्णन के २४ नवीन पदों का संकलन है। ये पद पुस्तक के अन्य पदों के समान उच्च कोटि के नहीं हैं, किंतु इनकी नवीनता के कारण ही इनका संकलन किया गया है।

सूरदास कृत बाल-लीला के समस्त पद विश्व साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर सकते हैं। फिर इस पुस्तक में तो उनमें से भी छूटे-छुटाए सर्वोत्तम पद ही संकलित किये गये हैं। ऐसी दशा में इन पदों के काव्य विषयक महत्व पर जितना भी कहा जाय थोड़ा है। मैंने इस बात की चेष्टा की थी कि सूरदास के बाल्य वर्णन का काव्य-सौन्दर्य प्रकट करने के लिए यहाँ पर कुछ पद उद्धृत करूँ, किंतु सभी पद एक से एक बढ़ कर हैं, अतः यही निश्चय नहीं हो सका कि किन पदों को लिया जाय और किन को छोड़ा जाय। ऐसी दशा में इस प्रकार की चेष्टा 'सूर्य को दीपक दिखाने' के समान व्यर्थ ज्ञात हुई। मेरा पाठकों से आग्रह है कि वे इस पुस्तक में संकलित समस्त पदों का ही पाठ करें; तभी उनको वास्तविक आनंद की प्राप्ति हो सकती है।

सूरसागर की हस्त लिखित एवं मुद्रित अनेक प्रतियों के पाठ में जितनी गड़बड़ी है, उतनी नागरी प्रचारिणी सभा के सूरसागर में नहीं है। मैंने संकलित पदों का पाठ इसी सूरसागर के अनुसार रखा है, जिसके लिए मैं सभा का अनुगृहीत हूँ। आशा है इस संकलन से सूर-साहित्य के एक अभाव की किंचित् पूर्ति होगी और सूरदास की रचनाओं के प्रेमियों को इससे संतोष होगा।

अग्रवाल भवन,
पौष शु० ४ सं० २००६

—प्रभुदयाल मीतल



सूरदास

[जन्म सं० १५३५ :: देहावसान सं० १६४०,]

ॐ

सूर-बालकृष्ण-पदावली



कथा-प्रसंग

राग सारंग

बाल-विनोद भावती लीला, अति पुनीत मुनि भाषी।
सावधान ह्वै सुनो परीच्छित! सकल देव-मुनि साखी॥
कालिंदी के कूल बसत, इक मधुपुरि नगर रसाला।
कालनेमि अरु उग्रसेन-कुल, उपज्यौ कंस भुवाला॥
आदि - ब्रह्म - जननी, सुर-देवी, नाम देवकी बाला।
दई बिवाहि कंस बसुदेवहिं, दुख-भंजन, सुख-माला॥
हय - गय - रतन - हेम - पाटंबर, आनँद - मंगलचारा।
समदत भई अनाहत बानी, कंस - कान भनकारा॥
याकी कोखि औतरै जो सुत, करै प्रान - परिहारा।
रथ तें उतरि, केस गहि राजा, कियौ खड्ग पटतारा॥
तब बसुदेव दीन ह्वै भाष्यौ, पुरुष न तिय-बध करई।
मोकों भई अनाहत बानी, तातें सोच न टरई॥
आगै बृच्छ फरै जो बिष-फल, बृच्छ बिना किन सरई।
याहि मारि, तोहिं और बिवाहौं, अग्र-सोच क्यौं मरई!
यह सुनि सकल देव-मुनि भाष्यौ, राय! न ऐसी कीजै।
तुम्हरे मान्य बसुदेव-देवकी, जीव-दान इहिं दीजै॥
कीन्यौ जज्ञ होत है निष्फल, कह्यौ हमारौ कीजै।
याके गर्भ अवतरैं जे सुत, सावधान ह्वै लीजै॥
पहिलौ पुत्र देवकी जायौ, लै बसुदेव दिखायौ।
बालक देखि कंस हँसि दीन्यौ, सब अपराध छमायौ॥
"कंस! कहा लरिकाई कीनी!", कहि नारद समुझायौ।
"जाकौ भरम करत हौ राजा, मति पहिलै सो आयौ!"
यह सुनि कंस पुत्र फिरि माँग्यौ, इहिं बिधि सबनि सँहारौ।
तब देवकी भई अति ब्याकुल, कैसै प्रान प्रहारौं॥
कंस बंस कौ नास करत है, कहँ लौं जीव उबारौं।
यह बिपदा कब मेटहिं श्रीपति अरु हौं काहिं पुकारौं॥

धेनु रूप धरि पुहुमि पुकारी, सिव-विरंचि के द्वारा ।
सब मिलि गए जहाँ पुरुषोत्तम, जिहिं गति अगम अपारा ॥
छीर-समुद्र मध्य तैं यौं हरि, दीरघ वचन उचारा ।
उधरौं धरनि, असुर-कुल मारौं, धरि नर-तन-अवतारा ॥
सुर-नर-नाग तथा पसु-पच्छी, सब कौं आयसु दीन्हौ ।
गोकुल जनम लेहु सँग मेरे, जो चाहत सुख कीन्हौ ॥
जेहिं माया विरंचि-सिव मोहे, वहै बानि करि चीन्हौ ।
देवकि-गर्भ अकर्षि रोहिनी, आप बास करि लीन्हौ ॥
हरि के गर्भ-बास जननी कौ, वदन उजारौ लाग्यौ ।
मानहुँ सरद-चंद्रमा प्रगट्यौ, सोच-तिमिर तन भाग्यौ ॥
तिहिं छन कंस आनि भयौ ठाढ़ौ, देखि महातम जाग्यौ ।
अबकी बार आपु आयौ है अरी, अपुनपौ त्याग्यौ ॥
दिन दस गऐं देवकी, अपनौ वदन विलोकन लागी ।
कंस-काल जिय जानि गर्भ मैं, अति आनंद सभागी ॥
सुर-नर-देव वंदना आए, सोवत तैं उठि जागी ।
अविनासी कौ आगम जान्यौ, सकल देव अनुरागी ॥
कछु दिन गऐं गर्भ कौ आलस, उर देवकी जनायौ ।
कासौं कहौं सखी कोउ नाहिंन, चाहति गर्भ दुरायौ ॥
बुध-रोहिनी-अष्टमी-संगम, वसुदेव निकट बुलायौ ।
सकल लोकनायक, सुखदायक, अजन जन्म धरि आयौ ॥
माथैं मुकुट, सुभग पीतांबर, उर सोभित भृगु-रेखा ।
संख-चक्र-गदा-पद्म विराजत, अति प्रताप सिसु-भेषा ॥
जननी निरखि भई तन व्याकुल, यह न चरित कहुँ देखा ।
बैठी सकुचि, निकट पति बोल्यौ, दुहुँनि पुत्र-मुख पेखा ॥
सुनि देवकि ! इक आन-जन्म की, तोकौं कथा सुनाऊँ ।
तैं माँग्यौ, हौं दियौ कृपा करि, तुम सौ बालक पाऊँ ॥
सिव-सनकादि आदि ब्रह्मादिक ज्ञान-ध्यान नहिं आऊँ ।
भक्तवछल बानौ है मेरौ, बिरुदहिं कहा लजाऊँ ॥
यह कहि मया-मोह अरुझाए, सिसु ह्वै रोवन लागे ।
अहो वसुदेव ! जाहु लै गोकुल, तुम हो परम सभागे ॥
घन-दामिनि धरती लौं कौंधै, जमुना-जल सौं पागे ।
आगै जाउँ जमुन-जल गहिरौ, पाछैं सिंह जु लागे ॥
लै वसुदेव धँसे दह सूधे, सकल देव अनुरागे ।

जानु, जंघ, कटि,ग्रीव, नासिका, तब लियौ स्याम उछाँगे ॥
चरन पसारि परसी कालिंदी, तरवा नीर तियागे ।
सेष सहस फन ऊपर छायौ, लै गोकुल कों भागे ॥
पहुँचे जाइ महर-मंदिर मैं, मनहिं न संका कीनो ।
देखी परी जोगमाया, वसुदेव गोद करि लीनी ॥
लै वसुदेव मधुपुरी पहुँचे, प्रगट सकल पुर कीनी ।
देवकी-गर्भ भई है कन्या, राइ न वात पतीनी ॥
पटकत सिला गई आकासहिं, दोउ भुज चरन लगाई ।
गगन गई, वोली सुरदेवी, कंस ! मृत्यु नियराई ॥
जैसैं मीन जाल मैं क्रीड़त, गनै न आपु लखाई ।
तैसैहिं कंस-काल उपज्यौ है, व्रज मैं जादवराई ॥
यह सुनि कंस देवकी आगै, रह्यौ चरन सिर नाई ।
मैं अपराध कियौ, सिसु मारे, लिख्यौ न मेट्यौ जाई ॥
काकें सत्रु जन्म लीन्यौ है, वूझै मतौ वुलाई ।
चारि पहर सुख-सेज परे निसि, नैकु नींद नहिं आई ॥
जागी महरि, पुत्र-मुख देख्यौ, आनँद-तूर वजायौ ।
कंचन-कलस, होम, द्विज-पूजा, चंदन भवन लिपायौ ॥
वरन-वरन रँग ग्वाल वने, मिलि गोपिनि मंगल गायौ ।
वहु विधि व्योम कुसुम सुर वरपत, फूलनि गोकुल छायौ ॥
आनँद भरे करत कौतूहल, प्रेम-मगन नर-नारी ।
निर्भय अभय-निसान वजावत, देत महरि कों गारी ॥
नाचत महर मुदित मन कीन्हे, ग्वाल वजावत तारी ।
'सूरदास' प्रभु गोकुल प्रगटे, मथुरा-गर्व-प्रहारी ॥१॥

जन्मोत्सव

नंद-गृह का आनंद—

राग आसावरी

व्रज भयौ महर कें पूत, जव यह वात सुनी ।
सुनि आनंदे सव लोग, गोकुल-गनक-गुनी ॥
अति पूरन पूरे पुन्य, रोपी सुथिर थुनी ।
ग्रह-लगन-नपत-वल सोधि, कीन्ही वेद-धुनी ॥
सुनि धाई सव व्रजनारि, सहज सिंगार किये ।
तन पहिरे नूतन चीर, काजर नैन दिये ॥

कसि कंचुकि, तिलक लिलार, सोभित हार हिये ।
कर-कंकन, कंचन-थार, मंगल-साज लिये ॥
सुभ स्रवननि तरल तरौन, बैनी सिथिल गुही ।
सिर बरषत सुमन सुदेस, मानौ मेघ फुही ॥
मुख मंडित रोरी रंग, सेंदुर माँग छुही ।
उर अंचल उड़त न जानि, सारी सुरंग सुही ।
ते अपने-अपने मेल, निकसीं भाँति भली ॥
मनु लाल-मुनैयनि पाँति, पिंजरा तोरि चली ।
गुन गावत मंगल-गीत, मिलि दस-पाँच अली ॥
मनु भोर भएँ रवि देखि, फूलीं कमल-कली ।
पिय-पहिलैं पहुँची जाइ, अति आनंद भरीं ॥
लईं भीतर भवन बुलाइ, सब सिसु-पाइ परीं ।
इक बदन उघारि निहारि, देहिं असीस खरी ।
चिरजीवो जसुदा-नंद, पूरन-काम करी ॥
धनि दिन है, धनि यह राति, धनि-धनि पहर-घरी ।
धनि-धन्य महरि की कोख, भाग-सुहाग भरी ॥
जिनि जायौ ऐसौ पूत, सब सुख-फरनि फरी ।
थिर थाप्यौ सब परिवार, मन की सूल हरी ॥
सुनि ग्वालनि गाइ बहोरि, बालक बोलि लए ।
गुहि गुंजा घसि बन-धातु, अंगनि चित्र ठए ॥
सिर दधि-माखन के माट, गावत गीत नए ।
डफ-झाँझ-मृदंग बजाइ, सब नँद-भवन गए ॥
मिलि नाचत करत कलोल, छिरकत हरद-दही ।
मनु बरषत भादौं मास, नदी घृत-दूध बही ॥
जब जहाँ-जहाँ चित जाइ, कौतुक तहीं-तहीं ।
सब आनँद-मगन गुवाल, काहूँ बदत नहीं ॥
इक धाइ नंद पै जाइ, पुनि-पुनि पाइ परैं ।
इक आपु आपुहीं माहिं, हँसि-हँसि मोद भरैं ॥
इक अभरन लेहिं उतारि, देत न संक करैं ।
इक दधि-गोरोचन-दूब, सबके सीस धरैं ॥
तब न्हाइ नंद भए ठाढ़, अरु कुस हाथ धरे ।
नांदीमुख पितर पुजाइ, अंतर सोच हरे ॥

घसि चंदन चारु मँगाइ, विप्रनि तिलक करे।
द्विज-गुरु-जन कौं पहिराइ, सव के पाइ परे॥
तहँ गैयाँ गनी न जाहिं, तरुनी वच्छ वढ़ीं।
जे चरहिं जमुन के तीर, दूने दूध चढ़ीं॥
खुर ताँवे, रूपे पीठि, सौने सींग मढ़ीं।
ते दीन्हीं द्विजनि अनेक, हरपि असीस पढ़ीं॥
सव इष्ट मित्र अरु वंधु, हँसि-हँसि वोलि लिये।
मथि मृगमद-मलय-कपूर, माथे तिलक किये॥
उर मनि-माला पहिराइ, वसन विचित्र दिये।
दै दान-मान-परिधान, पूरन-काम किये॥
वंदीजन - मागध - सूत, आँगन - भौन भरे।
ते वोले लै-लै नाउँ, नहिं हित कोउ विसरे॥
मनु वरपत मास अपाढ़, दादुर-मोर ररे।
जिन जो जाँच्यौ सोइ दीन, अस नँदराइ ढरे॥
तव अंवर और मँगाइ, सारी सुरँग चुनी।
ते दीनी वधुनि वुलाइ, जैसी जाहि वनी॥
ते निकसीं देति असीस, रुचि अपनी-अपनी।
वहुरीं सव अति आनंद, निज गृह गोप-धनी॥
पुर घर – घर भेरि – मृदंग, पटह – निसान वजे।
वर वारनि वंदनवार, कंचन कलस सजे॥
ता दिन तें वे व्रज - लोग, सुख - संपति न तजे।
सुनि सवकी गति यह 'सूर', जे हरि-चरन भजे॥२॥

राग धनाश्री

आजु नंद के द्वारैं भीर।
इक आवत, इक जात विदा ह्वै, इक ठाढ़े मंदिर के तीर॥
कोउ केसरि कौ तिलक वनावति, कोउ पहिरति कंचुकी सरीर।
एकनि कौं गौ-दान समर्पत, एकनि कौं पहिरावत चीर॥
एकनि कौं भूपन – पाटंवर, एकनि कौं जु देत नग – हीर।
एकनि कौं पुहुपनि की माला, एकनि कौं चंदन घसि नीर॥
एकनि माथैं दूव-रोचना, एकनि कौं वोधति दै धीर।
'सूरदास' धनि स्याम सनेही, धन्य जसोदा पुन्य-सरीर॥३॥

राग गौरी

बहुत नारि सुहाग-सुंदरि और घोप कुमारि ।
सजन-प्रीतम-नाम लै-लै, दै परसपर गारि ॥
अनंद अतिसै भयौ घर-घर, नृत्य ठावँहिं-ठावँ ।
नंद - द्वारैं भेंट लै - लै उमह्यौ गोकुल गावँ ॥
चौक चंदन लीपि कै, धरि आरती संजोइ ।
कहति घोप-कुमारि, ऐसौ अनँद जो नित होइ !
द्वार सथिया देति स्यामा, सात सींक बनाइ ।
नव किसोरी मुदित ह्वै-ह्वै गहति जसुदा - पाइ ॥
करि अलिंगन गोपिका, पहिरैं अभूषन-चीर !
गाइ-बच्छ सँवारि ल्याए, भई ग्वारनि भीर ॥
मुदित मंगल सहित लीला करैं गोपी-ग्वाल ।
हरद, अच्छत, दूब, दधि लै, तिलक करैं ब्रजबाल ॥
एक एक न गनत काहूँ, इक खिलावत गाइ ।
एक हेरी देहिं, गावहिं, एक भेंटहिं धाइ ॥
एक बिरध-किसोर-बालक, एक जोबन जोग ।
कृष्न-जन्म सु प्रेम-सागर, क्रीड़ैं सब ब्रज-लोग ॥
प्रभु मुकुंद के हेत नूतन होहिं घोप-विलास ।
देखि ब्रज की संपदा कौं, फूले 'सूरजदास' ॥४॥

राग कल्यान

सोभा-सिंधु न अंत रही री ।
नंद-भवन भरि पूरि उमँगि चलि, ब्रज की बीथिनि फिरति बही री ॥
देखी जाइ आजु गोकुल मैं, घर-घर बेचति फिरति दही री ।
कहँ लगि कहौं बनाइ बहुत बिधि, कहत न मुख सहसहुँ निबही री ॥
जसुमति-उदर-अगाध-उदधि तें, उपजी ऐसी सबनि कही री ।
'सूर' स्याम प्रभु इंद्र-नीलमनि, ब्रज-बनिता उर लाइ गही री ॥५॥

बधाई—

राग धनाश्री

आजु बधायौ नंदराइ कैं, गावहु मंगलचार ।
आईं मंगल-कलस साजि कै, दधि फल नूतन डार ॥
उर मेले नंदराइ कैं, गोप-सखनि मिलि हार ।
मागध-बंदी-सूत अति, करत कुतूहल बार ॥
आए पूरन आस कै, सब मिलि देत असीस ।
नंदराइ कौ लाड़िलौ, जीवै कोटि बरीस ॥
तब ब्रज-लोगनि नंद जू, दीने बसन बनाइ ।
ऐसी सोभा देखि कै, 'सूरदास' बलि जाइ ॥६॥

राग काफी

आजु हो निसान बाजैं, नंद जू महर के।
आनँद-मगन नर, गोकुल सहर के॥
आनंद भरी जसोदा, उमँगि अंग न मात,
आनंदित भईं गोपी गावतिं चहर के।
दूध-दधि-रोचन कनक-थार लै लै चलीं,
मानौ इंद्र-बधू जुरीं पाँतिनि बहर के॥
आनंदित ग्वाल-बाल, करत विनोद ख्याल,
भुज भरि-भरि धरि अंकम महर के।
आनंद-मगन धेनु, स्रवैं थनु पय-फेनु,
उमँग्यौ जमुन-जल उछलि लहर के॥
अंकुरित तरु-पात, उकठि रहे जे गात,
वन-बेली प्रफुलित कलिनि कहर के।
आनंदित विप्र, सूत, मागध, जाचक-गन,
उमँगि असीस देत सब हित हरि के॥
आनँद-मगन सब अमर गगन छाए,
पुहुप विमान चढ़े पहर-पहरके।
'सूरदास' प्रभु आइ गोकुल प्रगट भए,
संतनि हरप, दुष्ट-जन-मन धरके ॥७॥

राग काफी

(माई) आजु हो बधायौ बाजै नंद गोप-राइ कै।
जदुकुल-जादौराइ जनमे हैं आइ कै॥
आनंदित गोपी-ग्वाल, नाचैं कर दै-दै ताल,
अति अहलाद भयौ जसुमति माइ कै।
सिर पर दूब धरि, बैठे नंद सभा मधि,
द्विजनि कौं गाइ दीनी बहुत मँगाइ कै॥
कनक कौ माट लाइ, हरद-दही मिलाइ,
छिरकैं परसपर छल-बल धाइ कै।
आठैं कृष्न पच्छ भादौं, महर कैं दधि कादौं,
मोतिनि बँधायौ बार महल मैं जाइ कै॥
ढाढ़ी औ ढाढ़िनि गावैं, ठाढ़े हुरके बजावैं,
हरपि असीस देत मस्तक नवाइ कै।
जोइ-जोइ माँग्यौ जिनि, सोइ-सोइ पायौ तिनि,
दीजै 'सूरदास' दर्स भक्तनि बुलाइ कै ॥८॥

राग जैतश्री

आजु बधाई नंद कें माई ! ब्रज की नारि सकल जुरि आईं ।
सुंदर नंद महर के मंदिर । प्रगट्यौ पूत सकल सुख-कंदर ॥
जसुमति-ढोटा ब्रज की सोभा । देखि सखी, कछु औरै गोभा ।
लछिमी-सी जहँ मालिनि बोलै । बंदन-माला बाँधत डोलै ॥
द्वार बुहारति फिरति अष्टसिधि । कौरनि सथिया चीतति नवनिधि ।
गृह-गृह तें गोपी गवनीं जब । रंग-गलिनि बिच भीर भई तब ॥
सुबरन-थार रहे हाथनि लसि । कमलनि चढ़ि आए मानौ ससि ।
उमँगी प्रेम-नदी-छबि पावैं । नंद-सदन-सागर कौं धावैं ॥
कंचन-कलस जगमगैं नग के । भागे सकल अमंगल जग के ।
डोलत ग्वाल मनौ रन जीते । भए सबनि के मन के चीते ॥
अति आनंद नंद रस भीने । परबत सात रतन के दीने ।
कामधेनु तें नैंकु न हीनी । द्वै लख धेनु द्विजनि कौं दीनी ॥
नंद-पौरि जे जाँचन आए । बहुरौ फिरि जाचक न कहाए ।
घर के ठाकुर कें सुत जायौ । 'सूरदास' तब सब सुख पायौ ॥६॥

ढाढ़ी-ढाढ़िनि— राग जैतश्री

(नंद जू) मेरे मन आनंद भयौ, मैं गोवर्धन तें आयौ ।
तुम्हरैं पुत्र भयौ, हौं सुनि कै, अति आतुर उठि धायौ ॥
बंदीजन अरु भिच्छुक सुनि-सुनि दूरि-दूरि तें आए ।
इक पहिलैं ही आसा लागे, बहुत दिननि तें छाए ॥
ते पहिरे कंचन-मनि-भूषन, नाना बसन अनूप ।
मोहि मिले मारग मैं, मानौ जात कहूँ के भूप ॥
तुम तौ परम उदार नंद जू, जो माँग्यौ सो दीन्हौ ।
ऐसौ और कौन त्रिभुवन मैं, तुम सरि साकौ कीन्हौ !
कोटि देहु तौ रुचि नहिं मानौं, बिनु देखे नहिं जैहौं ।
नंदराइ ! सुनि बिनती मेरी, तबहिं बिदा भल ह्वैहौं ॥
दीजै मोहि कृपा करि सोई, जो हौं आयौ माँगन ।
जसुमति-सुत अपनैं पाइनि चलि, खेलत आवै आँगन ॥
जब हँसि कै मोहन कछु बोलै, तिहि सुनि कै घर जाऊँ ।
हौं तौ तेरे घर कौ ढाढ़ी, 'सूरदास' मोहिं नाऊँ ॥७॥

मैं तेरे घर कौं हौं ढाढ़ी, मो सरि कोउ न आन।
सोइ लैहौं जो मो मन भावै, नंद महर की आन॥
धन्य नंद, धनि धन्य जसोदा, जिन जायौ अस पूत।
धन्य भूमि, ब्रजवासी धनि-धनि, आनँद करत अकूत॥
घर-घर होत अनंद बधाए, जहँ-तहँ मागध-सूत।
मनि-मानिक पाटंबर-अंबर, लेत न बनत बिभूत॥
हय-गय खोलि भँडार दिए सब, फेरि भरे ता भाँति।
जबहिं देत तबहीं फिरि देखत, संपति घर न समाति॥
ते मोहिं मिले जात घर अपने, मैं बूझी तब जाति।
हँसि-हँसि दौरि मिले अंकम भरि, हम तुम एकै ज्ञाति॥
संपति देहु, लेहुँ नहिं एकौ, अन्न-वस्त्र किहिं काज?
जो मैं तुम सौं माँगन आयौ, सो लैहौं नँदराज!
अपने सुत कौ बदन दिखावहु, बड़े महर सिरताज।
तुम साहब, मैं ढाढ़ी तुम्हरौ, प्रभु मेरे ब्रजराज॥
चंद्र-बदन-दरसन-संपति दै, सो मैं लै घर जाउँ।
जो संपति सनकादिक दुरलभ, सो है तुम्हरे ठाउँ॥
जाकौं नेति-नेति स्रुति गावत, तेइ कमल-पद ध्याउँ।
हौं तेरौ जनम-जनम कौ ढाढ़ी, 'सूरज' दास कहाउँ॥२०॥

राग धनाश्री

(नंद जू) दुःख गयौ, सुख आयौ सबनि कौं देव, पितर भल मान्यौ।
तुम्हरौ पुत्र प्रान सबहिनि कौ, भुवन चतुर्दस जान्यौ॥
हौं तौ तुम्हरे घर कौ ढाढ़ी, नाउँ सुनैं सचु पाऊँ।
गिरि गोवर्धन बास हमारौ, घर तजि अनत न जाऊँ॥
ढाढ़िनि मेरी नाचै-गावै, हौं हूँ ढाढ़ बजाऊँ।
हमरौ चीत्यौ भयौ तुम्हारैं, जो माँगौ सो पाऊँ॥
अब तुम मोकौं करो अजाची, जो कहुँ कर न पसारौं।
द्वारैं रहौं, देहुँ इक मंदिर, स्याम-सुरूप निहारौं॥
हँसि ढाढ़िनि ढाढ़ी सो बोली, अब तू बरनि बधाई।
ऐसो दियौ न देहि 'सूर' कोउ, जसुमति हौं पहिराई॥२१॥

ढाढ़ी दान-मान के भाई!
नंद उदार भए पहिरावत, बहुत भली बनि आई॥
जब-जब नाम धरौं ढाढ़ी कौ, जनम-करम-गुन गाऊँ।
अर्थ-धर्म-कामना-मुक्ति-फल, चारि पदारथ पाऊँ॥
लै ढाढ़िन कंचन-मनि-मुक्ता, नाना बसन अनूप।
हीरा-रतन-पटंबर हमकौं दीन्हे ब्रज के भूप॥

अब तौ भली भई, नारायन-दरस निरखि, निधि पाई।
जहँ-तहँ वंदनवार विराजित, घर-घर बजति बधाई॥
जो जाँच्यौ, सोई तिन पायौ, तुम्हरी भई बड़ाई।
भक्ति देहु, पालनैं झुलाऊँ 'सूरदास' बलि जाई॥२२॥

'सोहिलौ'-गायन— राग सारंग

गौरि-गनेस्वर बीनऊँ (हो), देवी सारद तोहिं।
गावौं हरि कौ सोहिलौ (हो), मन-आखर दै मोहिं॥
हरपि बधावा मन भयौ (हो), रानी जायौ पूत।
घर-बाहर माँगै सबै (हो), ठाढ़े मागध-सूत॥
आठ मास चंदन पियौ (हो), नवएँ पियौ कपूर।
दसएँ मास मोहन भए (हो), आँगन बाजै तूर॥
हरषीं पास-परोसिनैं (हो), हरप नगर के लोग।
हरषीं सखी-सहेलरी (हो), आनँद भयौ सुभ-जोग॥
बाजन बाजैं गहगहे (हो), बाजैं मंदिर भेरि।
मालिन बाँधै तोरना (रे), आँगन रोपैं केरि॥
अनगढ़ सोना ढोलना (गढ़ि), ल्याए चतुर सुनार।
बीच-बीच हीरा लगे (नँद) लाल-गरे कौ हार॥
जसुमति भाग-सुहागिनी (जिनि), जायौ हरि सौ पूत।
करहु लखन की आरती (री), अरु दधि काँदौ सूत॥
नाइन बोलहु नव रँगी (हो) ल्याउ महावर बेग।
लाख टका अरु झूमका (देहु) सारी दाइ कों नेग॥
अगरु चँदन कौ पालनौ (रँगि), ईंगुर ढार-सुढार।
लै आयौ गढ़ि डोलना (हो), विसकर्मा सुतहार॥
धन सो दिन, धनि सो घरी (हो), धनि-धनि जोतिष-जाग।
धन्य-धन्य मथुरापुरी (हो), धन्य महर कौ भाग॥
धनि-धनि माता देवकी (हो), धनि वसुदेव सुजान।
धनि-धनि भादों अष्टमी (हो) जनम लियौ जब कान्ह॥
काढ़ौ कोरे कापरा (अरु), काढ़ौ घी के मौन।
जाति-पाँति पहिराइ कै (सब), समदि छतीसौ पौन॥
काजर-रोरी आनहू (मिलि), करौ छटी कौ चार।
ऐपन की सी पूतरी (सब), सखियन कियौ सिंगार॥
कोट-मुकुट सोभा बनी, (सुभ), अंग बनी बनमाल।
'सूरदास' गोकुल प्रकट (भए) मोहन मदनगोपाल॥२३॥

पलना-झूलन—　　राग जैतश्री

कनक-रतन-मनि पालनौ, गढ्यौ काम सुतहार ।
विविध खिलौना भाँति के (वहु) गज-मुक्ता चहुँधार ॥
जननी उवटि न्हवाइ कै (सिसु) क्रम सों लीन्हे गोद ।
पौढ़ाए पट पालनैं (हँसि) निरखि जननि-मन-मोद ॥
अति कोमल दिन सात के (हो) अधर-चरन-कर लाल ।
'सूर' स्याम छवि अरुनता (हो) निरखि हरप व्रज-वाल ॥२४॥

राग धनाश्री

जसोदा हरि पालनैं झुलावै ।
हलरावै, दुलराइ मल्हावै, जोइ-सोइ कछु गावै ॥
मेरे लाल कों आउ निंदरिया, काहैं न आनि सुवावै ।
तू काहैं नहिं वेगिहिं आवै, तोकों कान्ह वुलावै ॥
कवहुँ पलक हरि मूँद लेत हैं, कवहुँ अधर फरकावै ।
सोवत जानि मौन ह्वै कै रहि, करि-करि सैन वतावै ॥
इहि अंतर अकुलाइ उठे हरि, जसुमति मधुरैं गावै ।
जो सुख 'सूर' अमर-मुनि दुरलभ, सो नँद-भामिनि पावै ॥२५॥

राग कान्हरो

पलना स्याम झुलावति जननी ।
अति अनुराग परस्पर गावति, प्रफुलित मगन होति नँद-घरनी ॥
उमँगि-उमँगि प्रभु भुजा पसारत, हरपि जसोमति अंकम भरनी ।
'सूरदास' प्रभु मुदित जसोदा, पूरन भई पुरातन करनी ॥२६॥

राग विलावल

चरन गहे अँगुठा मुख मेलत ।
नंद-घरनि गावति, हलरावति, पलना पर हरि खेलत ॥
जे चरनारविंद श्री-भूपन, उर तें नैंकु न टारति ।
देखौं धौं का रस चरननि मैं, मुख मेलत करि आरति ॥
जा चरनारविंद के रस कों सुर-मुनि करत विपाद ।
सो रस है मोहूँ कों दुरलभ, तातें लेत सवाद ॥
उछरत सिंधु, धराधर काँपत, कमठ पीठ अकुलाइ ।
सेप सहसफन डोलन लागे, हरि पीवत जव पाइ ॥
वढ़्यौ वृच्छ वट, सुर अकुलाने, गगन भयौ उतपात ।
महा प्रलय के मेघ उठे करि जहाँ-तहाँ आघात ॥
करुना करी, छाँड़ि पग दीन्हौं, जानि सुरनि मन संस ।
'सूरदास' प्रभु असुर-निकंदन, दुष्टनि के उर गंस ॥२७॥

यशोदा का सुख— राग बिहागरौ

नैंकु गोपालहिं मोकों दै री ।
देखौं वदन कमल नीके करि, ता पाछैं तू कनियाँ लै री ॥
अति कोमल कर-चरन-सरोरुह, अधर-दसन-नासा सोहै री ।
लटकन सीस, कंठ मनि भ्राजत, मनमथ कोटि वारनैं गै री ॥
वासर-निसा विचारति हौं सखि ! यह सुख कबहुँ न पायौ मैं री ।
निगमनि-धन, सनकादिक-सरवस, बड़े भाग्य पायौ है तैं री ॥
जाकौ रूप जगत के लोचन, कोटि चंद्र-रवि लाजत भै री ।
'सूरदास' बलि जाइ जसोदा, गोपिनि-प्रान, पूतना-बैरी ॥२८॥

राग बिलावल

अजिर प्रभातहिं स्याम कों, पलिका पौढ़ाए ।
आप चली गृह - काज कों, तहँ नंद बुलाए ॥
निरखि हरषि मुख चूमि कै, मंदिर पग धारी ।
आतुर नँद आए तहाँ, जहँ ब्रह्म मुरारी ॥
हँसे तात मुख हेरि कै, करि पग - चतुराई ।
किलकि झटकि उलटे परे, देवनि - मुनि - राई ॥
सो छबि नंद निहारि कै, तहँ महरि बुलाई ।
निरखि चरित गोपाल के, 'सूरज' बलि जाई ॥२९॥

राग रामकली

हरषे नंद टेरत महरि ।
आइ सुत-मुख देखि आतुर, डारि दै दधि-डहरि ॥
मथति दधि जसुमति मथानी, धुनि रही घर-घहरि ।
स्रवन सुनति न महर-बातैं, जहाँ-तहँ गइ चहरि ॥
यह सुनत तब मातु धाई, गिरे जाने झहरि ।
हँसत नँद-मुख देखि धीरज तब कर्‌यौ ज्यौं ठहरि ॥
स्याम उलटे परे देखे, बढ़ी सोभा - लहरि ।
'सूर' प्रभु कर सेज टेकत, कबहुँ टेकत ढहरि ॥३०॥

राग रामकली

महरि मुदित उलटाइ कै, मुख चूमन लागी ।
चिरजीवो मेरो लाड़िलौ, मैं भई सभागी ॥
एक पाख त्रय-मास कौ, मेरो भयो कन्हाई ।
पटकि रान उलटौ पर्‌यौ, मैं करौं बधाई ॥
नंद-घरनि आनँद भरी, बोलीं ब्रजनारी ।
यह सुख सुनि आईं सबै, 'सूरज' बलिहारी ॥३१॥

राग बिलावल

नंद-घरनि आनँद भरी, सुत स्याम खिलावै ।
कबहिं घुटुरुवनि चलहिंगे, कहि, बिधिहिं मनावै ॥
कबहिं दँतुलि द्वै दूध की, देखौं इन नैननि !
कबहिं कमल-मुख बोलिहैं, सुनिहौं उन बैननि ॥
चूमति कर-पग-अधर-भ्रू, लटकति लट चूमति ।
कहा बरनि 'सूरज' कहै, कहँ पावै सो मति ॥३२॥

राग बिलावल

नान्हरिया गोपाल लाल, तू बेगि बड़ौ किन होहि ।
इहिं मुख मधुर बचन हँसिकै धौं, जननि कहै कब मोहिं ॥
यह लालसा अधिक मेरे जिय, जो जगदीस कराहिं ।
मो देखत कान्हर इहिं आँगन, पग द्वै धरनि धराहिं ॥
खेलहिं हलधर-संग रंग-रुचि, नैन निरखि सुख पाऊँ ।
छिन-छिन छुधित जानि पय कारन,हँसि-हँसि निकट बुलाऊँ॥
जाकौ सिव-बिरंचि-सनकादिक, मुनिजन ध्यान न पाव ।
'सूरदास' जसुमति ता सुत-हित, मन अभिलाष बढ़ाव ॥३३॥

राग धनाश्री

सुत-मुख देखि जसोदा फूली ।
हरषित देखि दूध की दँतियाँ, प्रेममगन तन की सुधि भूली ॥
बाहिर तें तब नंद बुलाए, देखौ धौं सुंदर सुखदाई ।
तनक-तनक सी दूध-दँतुलिया, देखो, नैन सफल करो आई ॥
आनँद सहित महर तब आए, मुख चितवत दोउ नैन अघाई ।
'सूर' स्याम किलकत द्विज देख्यौ, मनौ कमल पर बिज्जु जमाई ॥३४॥

राग जैतश्री

लालन ! वारी या मुख ऊपर ।
माई मेरिहिं दीठि न लागै, तातैं मसि-बिंदा दियौ भ्रू पर ॥
सरबस मैं पहिलैं ही वार्यौ, नान्हीं-नान्हीं दँतुली दू पर ।
अब कहा करौं निछावरि 'सूरज', सोचति,अपने लालन जू पर ॥३५॥

राग सारंग

ललन ! हौं या छबि ऊपर वारी ।
बाल गोपाल लागौ इन नैननि, रोग-बलाइ तुम्हारी ॥
लट लटकनि, मोहन मसि-बिंदुका-तिलक भाल सुखकारी ।
मनौ कमल-दल सावक पेखत, उड़त मधुप छबि न्यारी ॥

लोचन ललित, कपोलनि काजर, छबि उपजति अधिकारी ।
सुख मैं सुख औरै रुचि बाढ़ति, हँसत देत किलकारी ॥
अलप दसन, कलबल करि बोलनि, बुधि नहिं परत बिचारी ।
बिकसति ज्योति अधर-बिच, मानौ बिधु मैं बिज्जु उज्यारी ॥
सुंदरता कौ पार न पावति, रूप देखि महतारी ।
'सूर' सिंधु की बूँद भई मिलि, मति-गति-दृष्टि हमारी ॥३६॥

राग जैतश्री

लाल ! हौं वारी तेरे मुख पर ।
कुटिल अलक, मोहनि-मन बिहँसनि, भृकुटी बिकट ललित नैननि पर ॥
दमकति दूध-दँतुलिया बिहँसत, मनु सीपज घर कियौ बारिज पर ।
लघु-लघु लट सिर घूँघरवारी, लटकन लटकि रह्यौ माथे पर ॥
यह उपमा कापै कहि आवै, कछुक कहौं सकुचति हौं जिय पर ।
नव-तन-चंद्र-रेख-मधि राजत, सुरगुरु-सुक्र-उदोत परसपर ॥
लोचन लोल कपोल ललित अति, नासा कौ मुकता रद-छद पर ।
'सूर' कहा न्यौछावर करियै, अपने लाल ललित लरखर पर ॥३७॥

अन्न-प्राशन—

राग सारंग

आजु कान्ह करिहैं अनप्रासन ।
मनि-कंचन के थार भराए, भाँति-भाँति के बासन ॥
नंद-घरनि ब्रज-बधू बुलाईं, जे सब अपनी पाँति ।
कोउ ज्योनार करति, कोउ घृत-पक, पटरस के बहु भाँति ॥
बहुत प्रकार किए सब व्यंजन, अमित बरन मिष्टान ।
अति उज्ज्वल-कोमल-सुठि-सुंदर, देखि महरि मन मान ॥
जसुमति नंदहिं बोलि कह्यौ तब, महर ! बुलावहु जाति ।
आपु गए नँद सकल महर-घर, लै आए सब ज्ञाति ॥
आदर करि बैठाइ सबनि कौं, भीतर गए नँदराइ ।
जसुमति उबटि न्हवाइ कान्ह कौं, पट-भूषन पहिराइ ॥
तन झँगुली, सिर लाल चौतनी, चूरा दुहुँ कर-पाइ ।
बार-बार मुख निरखि जसोदा, पुनि-पुनि लेति बलाइ ॥
घरी जानि सुत-मुख-जुठरावन, नँद बैठे लै गोद ।
महर बोलि बैठारि मंडली, आनँद करत बिनोद ॥
कनक-थार भरि खीर धरी लै, ता पर घृत-मधु नाइ ।
नँद लै-लै हरि मुख जुठरावत, नारि उठीं सब गाइ ॥
षटरस के परकार जहाँ लगि, लै-लै अधर छुवावत ।
बिस्वंभर जगदीस जगत-गुरु, परसत मुख करुवावत ॥

तनक-तनक जल अरध पौंछि कै, जसुमति पै पहुँचाए ।
हरषवंत जुवती सब लै-लै, मुख चूमति उर लाए ॥
महर-गोप सबही मिलि बैठे, पनवारे परसाए ।
भोजन करत अधिक रुचि उपजी, जो जाके मन भाए ॥
इहिं बिधि सुख बिलसत ब्रजबासी, धनि गोकुल नर-नारी ।
नंद-सुवन की या छवि ऊपर, 'सूरदास' बलिहारी ॥३८॥

बर्ष-गाँठ—

राग बिलावल

आजु भोर तमचुर के रोल ।
गोकुल मैं आनंद होत है, मंगल-धुनि महराने ढोल ॥
फूले फिरत नंद अति सुख भयौ, हरपि मँगावत फूल-तमोल ।
फूली फिरति जसोदा तन-मन, उबटि कान्ह अन्हवाइ अमोल ॥
तनक बदन, दोउ तनक-तनक कर, तनक चरन, पौंछति पट झोल ।
कान्ह गरैं सोहत मनि-माला, अंग अभूपन अँगुरिनि गोल ॥
सिर चौतनी डिठौना दीन्हौ, आँखि आँजि पहिराइ निचोल ।
स्याम करत माता सों झगरौ, अटपटात कलबल करि बोल ॥
दोउ कपोल गहि कै मुख चूमति, बरप-दिवस कहि करति कलोल ।
'सूर' स्याम ब्रज-जन-मनमोहन-बरप-गाँठि कौ डोरा खोल ॥३९॥

राग धनाश्री

अरी ! मेरे लालन की आजु बरप-गाँठि, सबै-
सखिनि कों बुलाइ मँगल-गान करावो ।
चंदन आँगन लिपाइ, मुतियनि चौकैं पुराइ,
उमँगि अँगनि आनँद सों, तूर बजावो ।
मेरे कहैं बिप्रनि बुलाइ, एक सुभ घरी धराइ,
बागे चीरे बनाइ, भूपन पहिरावो ।
अछत-दूब दल बँधाइ, लालन का गाँठि जुराइ,
इहै मोहिं लाहौ नैननि दिखरावो ।
पचरँग सारी मँगाइ, बधू जननि पैहराइ,
नाचैं सब उमँगि अंग, आनँद बढ़ावो ।
नँदरानी ग्वारिनि बुलाइ, इहै रीति कहि सुनाइ,
बेगि करो किन, बिलंब काहैं लगावो ।
जसुमति तब नँद बुलावति, लाल लिए कनियाँ दिखरावति,
लगन-घरी आवति, यातें, न्हवाइ बनावो ।
'सूर' स्याम छवि निहारति, तन-मन जुवति वारति,
अतिहीं सुख धारति, बरप-गाँठि जुरावो ॥४०॥

घुटरुवाँ-चलना—

राग आसावरी

घुटुरुनि चलत स्याम मनि-आँगन, मातु-पिता दोउ देखत री ।
कबहुँक किलकि तात-मुख हेरत, कबहुँ मातु-मुख पेखत री ॥
लटकन लटकत ललित भाल पर, काजर-बिंदु भ्रुव ऊपर री ।
यह सोभा नैननि भरि देखैं, नहिं उपमा तिहुँ भू पर री ॥
कबहुँक दौरि घुटुरुवनि लपकत, गिरत, उठत, पुनि धावै री ।
इततें नंद बुलाइ लेत हैं, उततें जननि बुलावै री ॥
दंपति होड़ करत आपुस मैं, स्याम खिलौना कीन्हौ री ।
'सूरदास' प्रभु ब्रह्म सनातन, सुत-हित करि दोउ लीन्हौ री ॥४१॥

राग बिलावल

राग कान्हरौ

आँगन खेलत घुटुरुनि धाए।
नील-जलद-अभिराम स्याम तन, निरखि जननि दोउ निकट बुलाए॥
बंधुक-सुमन-अरुन-पद-पंकज, अंकुस प्रमुख चिह्न बन आए।
नूपुर-कलरव मनु हंसनि सुत रचे नीड़, दै बाहँ बसाए॥
कटि किंकिनि वर हार ग्रीवदर, रुचिर बाहु भूषन पहिराए।
उर श्रीवच्छ मनोहर हरि-नख, हेम-मध्य मनि-गन बहु लाए॥
सुभग चिवुक, द्विज-अधर-नासिका, स्रवन-कपोल मोहिं सुठि भाए।
भ्रुव सुंदर, करुना-रस-पूरन लोचन मनहु जुगल जल-जाए॥
भाल बिसाल ललित लटकन मनि, बाल-दसा के चिकुर सुहाए।
मानौ गुरु-सनि-कुज आगै करि, ससिहिं मिलन तम के गन आए॥
उपमा एक अभूत भई तब, जब जननी पट पीत उढ़ाए।
नील जलद पर उडुगन निरखत, तजि सुभाव मनु तड़ित छपाए॥
अंग-अंग-प्रति मार-निकर मिलि, छबि-समूह लै-लै मनु छाए।
'सूरदास' सो क्यों करि बरनै, जो छबि निगम नेति करि गाए॥४५॥

राग बिलावल

नंद-धाम खेलत हरि डोलत।
जसुमति करति रसोई भीतर, आपुन किलकत बोलत॥
टेरि उठी जसुमति मोहन कों, आवहु काहे न धाइ।
बैन सुनत माता पहिचानी, चले घुटुरुवनि पाइ॥
लै उठाइ अंचल गहि पोंछै, धूरि भरी सब देह।
'सूरज' प्रभु जसुमति रज झारति, कहाँ भरी यह खेह? ॥४६॥

घुटुरुवाँ चलने की शोभा—

राग धनाश्री

किलकत कान्ह घुटुरुवनि आवत।
मनिमय कनक नंद के आँगन, बिंब पकरिबे धावत॥
कबहुँ निरखि हरि आपु छाहँ कों, कर सों पकरन चाहत।
किलकि हँसत राजत द्वै दतियाँ, पुनि-पुनि तिहिं अवगाहत॥
कनक-भूमि पर कर-पग-छाया, यह उपमा इक राजति।
करि-करि प्रतिपद प्रतिमनि बसुधा, कमल बैठकी साजति॥
बाल-दसा-सुख निरखि जसोदा, पुनि-पुनि नंद बुलावति।
अँचरा तर लै ढाँकि, 'सूर' के प्रभु कों दूध पियावति ॥४७॥

घुटरुवाँ-चलना—

राग आसावरी

घुटुरुनि चलत स्याम मनि-आँगन, मातु-पिता दोउ देखत री।
कबहुँक किलकि तात-मुख हेरत, कबहुँ मातु-मुख पेखत री॥
लटकन लटकत ललित भाल पर, काजर-बिंदु भ्रुव ऊपर री।
यह सोभा नैननि भरि देखैं, नहिं उपमा तिहुँ भू पर री॥
कबहुँक दौरि घुटुरुवनि लपकत, गिरत, उठत, पुनि धावै री।
इततें नंद बुलाइ लेत हैं, उततें जननि बुलावै री॥
दंपति होड़ करत आपुस मैं, स्याम खिलौना कीन्हौ री।
'सूरदास' प्रभु ब्रह्म सनातन, सुत-हित करि दोउ लीन्हौ री॥४१॥

राग बिलावल

सोभित कर नवनीत लिए।
घुटुरुनि चलत रेनु-तन-मंडित, मुख दधि लेप किए॥
चारु कपोल, लोल लोचन, गोरोचन-तिलक दिए।
लट-लटकनि मनु मत्त मधुप-गन मादक मधुहिं पिए॥
कठुला-कंठ, वज्र केहरि-नख, राजत रुचिर हिए।
धन्य 'सूर' एकौ पल इहिं सुख, का सत कल्प जिए॥४२॥

राग रामकली

खीझत जात माखन खात।
अरुन लोचन, भौंह टेढ़ी, बार-बार जँभात॥
कबहुँ रुनझुन चलत घुटुरुनि, धूरि धूसर गात।
कबहुँ झुकि कै अलक खैंचत, नैन जल भरि जात॥
कबहुँ तोतर बोल बोलत, कबहुँ बोलत तात।
'सूर' हरि की निरखि सोभा, निमिष तजत न मात॥४३॥

राग धनाश्री

हौं बलि जाउँ छबीले लाल की।
धूसर धूरि घुटुरुवनि रेंगनि, बोलनि बचन रसाल की॥
छिटकि रहीं चहुँ दिसि जु लटुरियाँ, लटकन-लटकनि भाल की।
मोतिनि सहित नासिका नथुनी, कंठ-कमल-दल-माल की॥
कछुक हाथ, कछु मुख लै, चितवनि नैन बिसाल की।
'सूरदास' प्रभु-प्रेम-मगन भइँ, ढिग न तजनि ब्रजबाल की॥

राग कान्हरौ

आँगन खेलत घुटुरुनि धाए।
नील-जलद-अभिराम स्याम तन, निरखि जननि दोउ निकट बुलाए॥
बंधुक-सुमन-अरुन-पद-पंकज, अंकुस प्रमुख चिह्न बन आए।
नूपुर-कलरव मनु हंसनि सुत रचे नीड़, दै बाहँ बसाए॥
कटि किंकिनि बर हार ग्रीवदर, रुचिर बाहु भूषन पहिराए।
उर श्रीवच्छ मनोहर हरि-नख, हेम-मध्य मनि-गन बहु लाए॥
सुभग चिबुक, द्विज-अधर-नासिका, स्रवन-कपोल मोहिं सुठि भाए।
भ्रुव सुंदर, करुना-रस-पूरन लोचन मनहु जुगल जल-जाए॥
भाल बिसाल ललित लटकन मनि, बाल-दसा के चिकुर सुहाए।
मानौ गुरु-सनि-कुज आगै करि, ससिहिं मिलन तम के गन आए॥
उपमा एक अभूत भई तब, जब जननी पट पीत उढ़ाए।
नील जलद पर उडुगन निरखत, तजि सुभाव मनु तड़ित छपाए॥
अंग-अंग-प्रति मार-निकर मिलि, छबि-समूह लै-लै मनु छाए।
'सूरदास' सो क्यों करि बरनै, जो छबि निगम नेति करि गाए॥४५॥

राग बिलावल

नंद-धाम खेलत हरि डोलत।
जसुमति करति रसोई भीतर, आपुन किलकत बोलत॥
टेरि उठी जसुमति मोहन कों, आवहु काहे न धाइ।
बैन सुनत माता पहिचानी, चले घुटुरुवनि पाइ॥
लै उठाइ अंचल गहि पोंछै, धूरि भरी सब देह।
'सूरज' प्रभु जसुमति रज झारति, कहाँ भरी यह खेह ?॥४६॥

घुटुरुवाँ चलने की शोभा—

राग धनाश्री

किलकत कान्ह घुटुरुवनि आवत।
मनिमय कनक नंद के आँगन, बिंब पकरिबे धावत॥
कबहुँ निरखि हरि आपु छाहँ कों, कर सों पकरन चाहत।
किलकि हँसत राजत द्वै दतियाँ, पुनि-पुनि तिहिं अवगाहत॥
कनक-भूमि पर कर-पग-छाया, यह उपमा इक राजति।
करि-करि प्रतिपद प्रतिमनि बसुधा, कमल बैठकी साजति॥
बाल-दसा-सुख निरखि जसोदा, पुनि-पुनि नंद बुलावति।
अँचरा तर लै ढाँकि, 'सूर' के प्रभु कों दूध पियावति॥४७॥

राग धनाश्री

कहाँ लौं वरनौ सुंदरताई ?
खेलत कुँवर कनक-आँगन मैं, नैन निरखि छवि पाई ॥
कुलही लसति सिर स्यामसुँदर कैं, वहु विधि सुरँग वनाई ।
मानौ नव घन ऊपर राजत, मघवा धनुष चढ़ाई ॥
अति सुदेस मृदु हरत चिकुर मन मोहन-मुख वगराई ।
मानौ प्रगट कंज पर मंजुल अलि-अवली फिरि आई ॥
नील, सेत अरु पीत, लाल मनि लटकन भाल रुलाई ।
सनि, गुरु-असुर, देवगुरु मिलि मनु भौम सहित समुदाई ॥
दूध-दंत-दुति कहि न जाति कछु अद्भुत उपमा पाई ।
किलकत-हँसत दुरति प्रगटति मनु, घन मैं विज्जु-छटाई ॥
खंडित वचन देत पूरन सुख, अलप-अलप जलपाई ।
घुटुरुनि चलत रेनु-तन-मंडित, 'सूरदास' वलि जाई ॥४८॥

राग नटनारायन

हरि जू की वाल-छवि कहौं वरनि ।
सकल सुख की सींव, कोटि-मनोज-सोभा-हरनि ॥
भुज भुजंग, सरोज नैननि, वदन विधु जित लरनि ।
रहे विवरनि, सलिल, नभ उपमा अपर दुरि डरनि ॥
मंजु मेचक मृदुल तनु, अनुहरत भूषन भरनि ।
मनहुँ सुभग सिंगार-सिसु-तरु, फर्‌यौ अद्भुत फरनि ॥
चलत पद-प्रतिबिंब मनि-आँगन घुटुरुवनि करनि ।
जलज-संपुट-सुभग-छवि भरि लेति उर जनु धरनि ॥
पुन्य फल अनुभवति सुतहिं विलोकि कै नँद-घरनि ।
'सूर' प्रभु की उर बसी किलकनि, ललित लरखरनि ॥४९॥

पाँवों चलना— राग बिलावल

सिखवति चलन जसोदा मैया ।
अरबराइ कर पानि गहावत, डगमगाइ धरनी धरै पैया ॥
कबहुँक सुंदर वदन विलोकति, उर आनँद भरि लेति वलैया ।
कबहुँक कुल-देवता मनावति, चिरजीवहु मेरौ कुँवर कन्हैया ॥
कबहुँक बल कौं टेरि बुलावति, इहिं आँगन खेलौ दोउ भैया ।
'सूरदास' स्वामी की लीला, अति प्रताप बिलसत नँदरैया ॥५०॥

राग सूहौ बिलावल

चलन चहत पाइनि गोपाल ।
लए लाइ अँगुरी नँदरानी, सुंदर स्याम तमाल ॥
डगमगात गिरि परत पानि पर, भुज भ्राजत नँदलाल ।
जनु सिर पर ससि जानि अधोमुख, धुकत नलिनि नमि नाल ॥
धूरि - धौत तन, अंजन नैननि, चलत लटपटी चाल ।
चरन रनित नूपुर - धुनि, मानौ बिहरत बाल मराल ॥
लट लटकनि सिर चारु चखौड़ा, सुठि सोभा सिसु भाल ।
'सूरदास' ऐसो सुख निरखत, जग जीजै बहु काल ॥५१॥

राग बिलावल

बाल-बिनोद आँगन की डोलनि ।
मनिमय भूमि नंद के आलय, बलि-बलि जाउँ तोतरे बोलनि ॥
कठुला कंठ कुटिल केहरि-नख, बज्र-माल बहु लाल अमोलनि ।
बदन सरोज तिलक गोरोचन, लट लटकनि मधुकर-गति डोलनि ॥
कर नवनीत परस आनन सौं, कछुक खात, कछु लग्यौ कपोलनि ।
कहि जन 'सूर' कहाँ लौं बरनौं, धन्य नंद जीवन जग तोलनि ॥५२॥

राग बिलावल

गहे अँगुरिया ललन की, नँद चलन सिखावत ।
अरबराइ गिरि परत हैं, कर टेकि उठावत ॥
बार-बार बकि स्याम सौं, कछु बोल बुलावत ।
दुहुँघाँ द्वै दँतुली भई, मुख अति छबि पावत ॥
कबहुँ कान्ह-कर छाँड़ि नँद, पग द्वैक रिंगावत ।
कबहुँ धरनि पर बैठि कै, मन मैं कछु गावत ॥
कबहुँ उलटि चले धाम कौं, घुटुरुनि करि धावत ।
'सूर' स्याम-मुख लखि महर, मन हरष बढ़ावत ॥५३॥

राग धनाश्री

कान्ह चलत पग द्वै-द्वै धरनी ।
जो मन में अभिलाष करति ही, सो देखति नँद-घरनी ॥
रुनुक-झुनुक नूपुर पग बाजत, धुनि अतिहीं मन-हरनी ।
बैठि जात पुनि उठत तुरतहीं, सो छबि जाइ न बरनी ॥
ब्रज-जुवती सब देखि थकित भईं, सुंदरता की सरनी ।
चिरजीवहु जसुदा कौ नंदन, 'सूरदास' कौं तरनी ॥५४॥

माता का आनंद—

राग सूहौ बिलावल

मनिमय आँगन नंद के, खेलत दोउ भैया।
गौर - स्याम जोरी बनी, बलराम कन्हैया॥
लटकति ललित लटूरियाँ, मसि-बिंदु-गोरोचन।
हरि-नख उर अति राजहीं, संतनि-दुख-मोचन॥
सँग-सँग जसुमति-रोहिनी, हितकारिनि मैया।
चुटकी देहिं नचावहीं, सुत जानि नन्हैया॥
नील - पीत पट ओढ़नी, देखत जिय भावै।
बाल - बिनोद अनंद सों, 'सूरज' जन गावै॥५५॥

राग नटनारायन

बलि गइ बाल-रूप मुरारि।
पाइ-पैंजनि रटति रुन-झुन, नचावति नँद-नारि॥
कबहुँ हरि कों लाइ अँगुरी, चलन सिखवति ग्वारि।
कबहुँ हृदय लगाइ हित करि, लेति अँचल डारि॥
कबहुँ हरि कों चितै चूमति, कबहुँ गावति गारि।
कबहुँ लै पाछै दुरावति, ह्याँ नहीं बनवारि॥
कबहुँ अँग भूषन बनावति, राइ-लोन उतारि।
'सूर' सुर-नर सबै मोहे, निरखि यह अनुहारि॥५६॥

राग बिलावल

भावत हरि कौ बाल-बिनोद।
स्याम-राम-मुख निरखि-निरखि, सुख-मुदित रोहिनी, जननि जसोद॥
आँगन-पंक-राग तन सोभित, चल नूपुर-धुनि सुनि मन मोद।
परम सनेह बढ़ावत मातनि, रबकि-रबकि हरि बैठत गोद॥
आनँद-कंद सकल सुखदायक, निसि-दिन रहत केलि-रस ओद।
'सूरदास' प्रभु अंबुज-लोचन, फिरि-फिरि चितवत ब्रज-जन-कोद॥५७॥

राग बिलावल

चलत स्यामघन राजत, बाजति पैंजनि पग-पग चारु मनोहर।
डगमगात आँगन मैं, निरखि बिनोद मगन सुर-मुनि-नर॥
उदित मुदित अति जननि जसोदा, पाछैं फिरति गहे अँगुरी कर।
मनौ धेनु तृन छाँड़ि बच्छ-हित, प्रेम द्रवित चित स्रवत पयोधर॥
कुंडल लोल कपोल बिराजत, लटकति ललित लटुकिया भ्रू पर।
'सूर' स्याम-सुंदर अवलोकत, बिहरत बाल-गोपाल नंद-घर॥५८॥

राग धनाश्री

आँगन खेलैं नंद के नंदा। जदुकुल-कुमुद-सुखद-चारु-चंदा।
संग-संग बल-मोहन सोहैं। सिसु-भूपन सुब कौ मन मोहैं॥
तन-दुति मोर-चंद जिमि झलकै। उमँगि-उमँगि अँग-अँग छवि छलकै।
कटि किंकिनि, पग पैंजनि बाजै। पंकज पानि पहुँचिया राजै॥
कठुला कंठ बघनहाँ नीके। नैन-सरोज-मैन-सरसी के।
लटकति ललित ललाट लटूरी। दमकति दूध-दँतुरियाँ रूरी॥
मुनि-मन हरत मंजु मसि बिंदा। ललित वदन बल-बालगुविंदा।
कुलही चित्र-बिचित्र झँगूली। निरखि जसोदा-रोहिनि फूलीं॥
गहि मनि-खंभ डिंभ डग डोलैं। कल-बल बचन तोतरे बोलैं।
निरखत झुकि, झाँकत प्रतिबिंबहिं। देत परम सुख पितु अरु अंबहिं॥
ब्रज-जन निरखत हिय हुलसाने। 'सूर' स्याम-महिमा को जाने॥५६॥

राग धनाश्री

चलत देखि जसुमति सुख पावै।
ठुमुकि-ठुमुकि पग धरनी रेंगत, जननी देखि दिखावै॥
देहरि लौं चलि जात, बहुरि फिरि-फिरि इतहीं कौं आवै।
गिरि-गिरि परत, बनत नहिं नाँघत सुर-मुनि सोच करावै॥
कोटि ब्रह्मंड करत छिन भीतर, हरत बिलंब न लावै।
ताकौं लिए नंद की रानी, नाना खेल खिलावै॥
तब जसुमति कर टेकि स्याम कौं, क्रम-क्रम करि उतरावै।
'सूरदास' प्रभु देखि-देखि, सुर-नर-मुनि-बुद्धि भुलावै॥६०॥

राग आसावरी

आनँद-प्रेम उमंगि जसोदा, खरी गुपाल खिलावै।
कबहुँक हिलकै-किलकै जननी मन-सुख-सिंधु बढ़ावै॥
दै करताल बजावति, गावति, राग अनूप मल्हावै।
कबहुँक पल्लव पानि गहावै, आँगन माँझ रिंगावै॥
सिव, सनकादि, सुकादि, ब्रह्मादिक, खोजत अंत न पावैं।
गोद लिए ताकौं हलरावै, तोतरे बैन बुलावै॥
मोहे सुर, नर, किन्नर, मुनिजन, रवि रथ नाहिं चलावै।
मोहि रहीं ब्रज की जुवती सब, 'सूरदास' जस गावै॥६१॥

राग सूहौ

आँगन स्याम नचावहीं, जसुमति नँदरानी।
तारी दै-दै गावहीं, मधुरी मृदु बानी॥

पाइनि नूपुर वाजई, कटि किंकिनि कूजै ।
नान्हीं एड़ियनि अरुनता, फल-विंव न पूजै ॥
जसुमति गान सुनै स्रवन, तव आपुन गावै ।
तारी वजावत देखई, पुनि आपु वजावै ॥
केहरि-नख उर पर रुरै, सुठि सोभाकारी ।
मनौ स्याम घन मध्य मैं, नव ससि-उजियारी ॥
गभुआरे सिर केस हैं, वर घूँघरवारे ।
लटकन लटकत भाल पर, विधु मधि गन तारे ॥
कठुला कंठ चिवुक-तरैं, मुख दसन विराजैं ।
खंजन विच सुक आनि कै, मनु पर्‌यौ दुराजैं ॥
जसुमति सुतहिं नचावई, छवि देखति जिय तें ।
'सूरदास' प्रभु स्याम कौ, मुख टरत न हिय तें ॥६२॥

गोपियों का आनंद—

राग आसावरी

जव तें आँगन खेलत देख्यौ, मैं जसुदा कौ पूत री ।
तव तें गृह सों नातौ टूट्यौ, जैसै काँचौ सूत री ॥
अति विसाल वारिज-दल-लोचन, राजति काजर-रेख री ।
इच्छा सों मकरंद लेत मनु अलि गोलक के वेप री ॥
स्रवन सुनत उतकंठ रहत हैं, जव वोलत तुतरात री ।
उमँगै प्रेम नैन-मग ह्वै कै, कापै रोक्यौ जात री ॥
दमकति दोउ दूध की दतियाँ, जगमग जगमग होति री ।
मानो सुंदरता-मंदिर मैं रूप-रतन की ज्योति री ॥
'सूरदास' देखैं सुंदर मुख, आनँद उर न समाइ री ।
मानौ कुमुद कामना-पूरन, पूरन इंदुहिं पाइ री ॥६३॥

राग आसावरी

अद्भुत इक चितयौ हौं सजनी, नंद महर के आँगन री ।
सो मैं निरखि अपुनपौ खोयौ, गई मथानी माँगन री ॥
वाल-दसा मुख-कमल विलोकत, कछु जननी सों वोलै री ।
प्रगटति हँसत दँतुलि, मनु सीपज दमकि दुरे दल ओलै री ॥
सुंदर भाल-तिलक गोरोचन, मिलि मसि-विंदुका लाग्यौ री ।
मनु मकरंद अँचै रुचि कै, अलि-सावक सोइ न जाग्यौ री ॥
कुंडल लोल कपोलनि झलकत, मनु दरपन मैं झाईं री ।
रही विलोकि विचारि चारु छवि, परमिति कहूँ न पाई री ॥

मंजुल तारनि की चपलाई, चित चतुराई करषै री ।
मनौ सरासन धरे कर स्मर, भौंह चढ़ै सर वरषै री ॥
जलधि थकित जनु काग पोत कौ कूल न कबहूँ आयौ री ।
ना जानौं किहिं अंग मगन मन, चाहि रही नहिं पायौ री ॥
कहँ लगि कहौं बनाइ बरनि छवि, निरखत मति-गति हारी री ।
'सूर' स्याम के एक रोम पर, देउँ प्रान बलिहारी री ॥६४॥

राग आसावरी

आजु गई हौं नँद-भवन मैं, कहा कहौं गृह-चैन री ।
चहूँ ओर चतुरंग लच्छमी, कोटिक दुहियत धैन री ॥
घूमि रहीं जित-तित दधि मथनी, सुनत मेघ-धुनि लाजै री ।
बरनौं कहा सदन की सोभा, वैकुंठहुँ तें राजै री ॥
बोलि लई नव वधू जानि जहँ, खेलत कुँवर कन्हाई री ।
मुख देखत मोहिनी सी लागी, रूप न बरन्यौ जाई री ॥
लटकन लटकि रहे भ्रू-ऊपर, रँग-रँग मनि-गन पोहे री ।
मानहुँ गुरु-सनि-सुक्र एक ह्वै, लाल भाल पर सोहे री ॥
गोरोचन कौ तिलक, निकटहीं काजर-बिंदुका लाग्यौ री ।
मनौ कमल कौ पी पराग, अलि-सावक सोइ न जाग्यौ री ॥
बिधु-आनन पर दीरघ लोचन, नासा लटकत मोती री ।
मानौ सोम संग करि लीने, जानि आपने गोती री ॥
सीपज-माल स्याम-उर सोहै, बिच बघ-नहँ छवि पावै री ।
मनौ द्वैज ससि नखत सहित है, उपमा कहत न आवै री ॥
सोभा-सिंधु अंग अंगनि प्रति, बरनत नाहिंन ओर री ।
जित देखौं मन भयौ तितहिं कौ, मनौ भरे कौ चोर री ॥
बरनौं कहाँ अंग-अँग-सोभा, भरी भाव जल-रास री ।
लाल गोपाल बाल-छवि बरनत, कवि-कुल करिहै हास री ॥
जो मेरी अँखियनि रसना होती, कहती रूप बनाइ री ।
चिरजीवहु जसुदा कौ ढोटा, 'सूरदास' बलि जाइ री ॥६५॥

मैं मोही तेरे लाल री ।
निपट निकट ह्वै कै तुम निरखो, सुंदर नैन बिसाल री ॥
चंचल दृग अंचल-पट-दुति-छबि, झलकत चहुँ दिसि झालरी ।
मनु सेवाल कमल पर अरुझे, भँवत भ्रमर भ्रम-चाल री ॥
मुक्ता-विद्रुम-नील-पीत-मनि, लटकत लटकन भाल री ।
मानौ सुक्र-भौम-सनि-गुरु मिलि, ससि के बीच रसाल री ॥

उपमा वरनि न जाइ सखी री ! सुंदर मदन-गोपाल री ।
'सूर' स्याम के ऊपर वारै तन-मन-धन ब्रजवाल री ॥६६॥

वाल-क्रीड़ा— राग धनाश्री

जव मोहन कर गही मथानी ।
परसत कर दधि-माट-नेति, चित उदधि-सैल-वासुकि भय मानी ॥
कबहुँक तीनि पैग भुव मापत, कबहुँक देहरि उलँघि न जानी !
कबहुँक सुर-मुनि ध्यान न पावत, कबहुँ खिलावति नंद की रानी !
कबहुँक अमर-खीर नहिं भावत, कबहुँक दधि-माखन रुचि मानी ।
'सूरदास' प्रभु की यह लीला, परति न महिमा सेष वखानी ॥६७॥

राग विलावल

नंद जू के वारे कान्हा, छाँड़ि दै मथनियाँ ।
वार-वार कहति मातु जसुमति नँदरनियाँ ॥
नैंकु रहो, माखन देउँ, मेरे प्रान-धनियाँ !
आरि जनि करो वलि-वलि जाउँ हौं निधनियाँ ॥
जाकौ ध्यान धरैं सवै, सुर-नर-मुनि जनियाँ ।
ताकौ नँदरानी मुख चूमै लिए कनियाँ ॥
सेष सहस आनन गुन गावत नहिं वनियाँ ।
'सूर' स्याम देखि सवै भूलीं गोप-धनियाँ ॥६८॥

राग विलावल

जसुमति दधि मथन करति, वैठी वर धाम अजिर,
ठाढ़े हरि हँसत नान्हि दँतियनि छवि छाजै ।
चितवत चित लै चुराइ, सोभा वरनी न जाइ,
मनु मुनि-मन-हरन-काज मोहिनी दल साजै ।
जननि कहति नाचौ तुम, दैहौं नवनीत मोहन !
रुनुक-झुनुक चलत पाइ, नूपुर-धुनि वाजै ।
गावत गुन 'सूरदास', वढ़्यौ जस भुव-अकास,
नाचत त्रैलोकनाथ माखन के काजै ॥६९॥

राग आसावरी

(एरी) आनँद सों दधि मथति जसोदा, घमकि मथनियाँ घूमै ।
निरतत लाल ललित मोहन, पग परत अटपटे भू मैं ॥
चारु चखौड़ा पर कुंचित कच, छवि मुक्ता ताहू मैं ।
मनु मकरंद-विंदु लै मधुकर, सुत - प्यावन - हित झूमै ॥
वोलत स्याम तोतरी वतियाँ, हँसि - हँसि दतियाँ दूमै ।
'सूरदास' वारी छवि ऊपर, जननि कमल - मुख चूमै ॥७०॥

राग बिलावल

त्यौं-त्यौं मोहन नाचै, ज्यौं-ज्यौं रई-घमरकौ होइ (री) ।
तैसियै किंकिनि-धुनि पग-नूपुर, सहज मिले सुर दोइ (री) ॥
कंचन कौ कठुला मनि-मोतिनि, बिच बघनहँ रह्यौ पोइ (री) ।
देखत बनै, कहत नहिं आवै, उपमा कों नहिं कोइ (री) ॥
निरखि-निरखि मुख नंद-सुवन को, सुर-नर आनँद होइ (री) ।
'सूर' भवन कौ तिमिर नसायौ, बलि गइ जननि जसोइ (री) ॥७१॥

राग बिलावल

प्रात समय दधि मथति जसोदा, अति सुख कमल-नयन-गुन गावति ।
अतिहिं मधुर गति, कंठ सुघर अति, नंद-सुवन-चित हितहिं करावति ॥
नील बसन तनु, सजल जलद मनु, दामिनि बिवि भुज-दंड चलावति ।
चंद्र बदन लट लटकि छबीली, मनहुँ अमृत रस ब्यालि चुरावति ॥
गोरस मथत नाद इक उपजत, किंकिनि-धुनि सुनि स्रवन रमावति ।
'सूर' स्याम अँचरा धरि ठाढ़े, काम कसौटी कसि दिखरावति ॥७२॥

राग ललित

छोटी-छोटी गोड़ियाँ, अँगुरियाँ छबीली छोटी,
नख-ज्योती, मोती मानौ कमल-दलनि पर ।
ललित आँगन खेलैं, ठुमुकि-ठुमुकि डोलैं,
झुनुक-झुनुक बोलैं पैंजनी मृदु मुखर ॥
किंकिनी कलित कटि, हाटक रतन जटि,
मृदु कर-कमलनि पहुँची रुचिर वर ।
पियरी पिछौरी झीनी, और उपमा न भीनी,
बालक दामिनि मानौ ओढ़े बारो बारि-धर ॥
उर बघ-नहाँ, कंठ कठुला, झँडूले बार,
बेनी लटकन मसि-बुंदा मुनि-मनहर ।
अंजन रंजित नैन, चितवनि चित चोरै,
मुख-सोभा पर वारौं अमित असम-सर ॥
चुटकी बजावति नचावति जसोदा रानी,
बाल-केलि गावति, मल्हावति सुप्रेम भर ।
किलकि-किलकि हँसैं, द्वै-द्वै दँतुरियाँ लसैं,
'सूरदास' मन बसैं, तोतरे बचन वर ॥७३॥

राग देवगंधार

कहन लागे मोहन मैया-मैया ।
नंद महर सों बाबा-बाबा, अरु हलधर सों भैया ।।
ऊँचे चढ़ि-चढ़ि कहति जसोदा, लै-लै नाम कन्हैया ।
दूरि खेलन जनि जाहु लला रे, मारैगो काहु की गैया ।।
गोपी-ग्वाल करत कौतूहल, घर-घर बजति बधैया ।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे दरस कों, चरननि की बलि जैया ।।७४।।

राग बिलावल

पलना भूलो मेरे लाल पियारे ।
सुसकनि की वारी हौं बलि-बलि, हठ न करहु तुम नंद-दुलारे ।।
काजर हाथ भरो जनि मोहन, ह्वैहैं नैना अति रतनारे ।
सिर कुलही, पग पहिरि पैजनी, तहाँ जाहु जहँ नंद बबा रे ।।
देखत यह विनोद धरनीधर, मात पिता बलभद्र ददा रे ।
सुर-नर-मुनि कौतूहल भूले, देखत 'सूर' सबै जु कहा रे ।।७५।।

राग बिलावल

क्रीड़त प्रात समय दोउ वीर ।
माखन माँगत, बात न मानत, झँखत जसोदा-जननी-तीर ।।
जननी मथि, सनमुख संकर्पन, खैंचत कान्ह खस्यौ सिर-चीर ।
मनहुँ सरस्वति संग उभय दुज, कल मराल अरु नील कँठीर ।।
सुंदर स्याम गही कबरी कर, मुक्ता-माल गही बलवीर ।
'सूरज' भप लैबे अप अपनौ, मानहुँ लेत निबेरे सीर ।।७६।।

राग बिलावल

माखन खात हँसत किलकत हरि, पकरि स्वच्छ घट देख्यौ ।
निज प्रतिबिंब निरखि रिस मानत, जानत आन परेख्यौ ।।
मन मैं माप करत, कछु बोलत, नंद बबा पै आयौ ।
वा घट मैं काहू कौ लरिका, मेरौ माखन खायौ ।।
महर कंठ लावत, मुख पोंछत, चूमत तिहिं ठाँ आयौ ।
हिरदै दिए लख्यौ वा सुत कों, तातें अधिक रिसायौ ।।
कह्यौ जाइ जसुमति सों ततछन, मैं जननी सुत तेरौ ।
आजु नंद सुत और कियौ, कछु कियौ न आदर मेरौ ।।
जसुमति बाल-बिनोद जानि जिय, उहीं ठौर लै आई ।
दोउ कर पकरि डुलावन लागी, घट मैं नहिं छबि पाई ।।
कुँवर हँस्यौ आनंद-प्रेम-बस, सुख पायौ नँदरानी ।
'सूरज' प्रभु की अद्भुत लीला, जिन जानी, तिन जानी ।।७७।।

रागबिलावल

कनक-कटोरा प्रातहीं, दधि, घृत सु मिठाई।
खेलत खात गिरावहीं, झगरत दोउ भाई॥
अरस परस चुटिया गहैं, बरजति है माई।
महा ढीठ मानैं नहीं, कछु लहुर-बड़ाई॥
हँसि कै बोली रोहिनी, जसुमति मुसुकाई।
जगन्नाथ धरनीधरहिं 'सूरज' बलि जाई ॥७८॥

राग बिलावल

गोपालराइ दधि माँगत अरु रोटी।
माखन सहित देहि मेरी मैया, सुपक सुकोमल रोटी॥
कत हौ आरि करत मेरे मोहन, तुम आँगन मैं लोटी ?
जो चाहो सो लेहु तुरतहीं, छाँड़ो यह मति खोटी॥
करि मनुहारि कलेऊ दीन्हौ, मुख चुपर्‌यौ अरु चोटी।
'सूरदास' कौ ठाकुर ठाढ़ौ, हाथ लकुटिया छोटी ॥७९॥

राग बिलावल

दोउ भैया मैया पै माँगत, दै री मैया ! माखन-रोटी।
सुनत भावती बात सुतनि की, झूठहिं धाम के काम अगोटी॥
बल जू गह्यौ नासिका-मोती, कान्ह कुँवर गही दृढ़ करि चोटी।
मानौ हंस मोर भष लीन्हे, कवि उपमा बरनै कछु छोटी॥
यह छबि देखि नंद-मन आनँद, अति सुख हँसत जात हैं लोटी।
'सूरदास' मन मुदित जसोदा, भाग बड़े, कर्मनि की मोटी ॥८०॥

राग धनाश्री

कजरी कौ पय पियहु लाल ! जासों तेरी बेनि बढ़ै।
जैसे देखि और ब्रज बालक, त्यौं बल-बैस चढ़ै॥
यह सुनि कै हरि पीवन लागे, ज्यौं-त्यौं लयौ लढ़ै।
अँचवत पय तातौ जब लाग्यो, रोवत जीभि डढ़ै॥
पुनि पीवत हीं कच टकटोरत, झूठहिं जननि रढ़ै।
'सूर' निरखि मुख हँसति जसोदा, सो सुख उर न कढ़ै ॥८१॥

राग रामकली

मैया ! कबहिं बढ़ैगी चोटी ?
किती बार मोहिं दूध पियत भई, यह अजहूँ है छोटी !
तू जो कहति बल की बेनी ज्यौं, ह्वै है लाँबी-मोटी।
काढ़त-गुहत-न्हवावत जैहै नागिनि सी भुइँ लोटी॥
काचो दूध पियावति पचि-पचि, देति न माखन-रोटी।
'सूरज' चिरजीवो दोउ भैया, हरि-हलधर की जोटी ॥८२॥

राग सारंग

मैया ! मोहिं बड़ौ करि लै री ।
दूध-दही–घृत–माखन–मेवा, जो माँगौं सो दै री ॥
कछू हौंस राखै जनि मेरी, जोइ-जोइ मोहिं रुचै री ।
होउँ बेगि मैं सबल सबनि मैं, सदा रहौं निरभै री ॥
रंगभूमि मैं कंस पछारौं, घीसि बहाऊँ बैरी ।
'सूरदास' स्वामी की लीला, मथुरा राखौं जै री ॥८३॥

राग रामकली

हरि अपने आँगन कछु गावत ।
तनक-तनक चरननि सों नाचत, मनहीं मनहिं रिझावत ॥
बाहँ उठाइ काजरी-धौरी गैयनि टेरि बुलावत ।
कबहुँक बाबा नंद पुकारत, कबहुँक घर मैं आवत ॥
माखन तनक आपनें कर लै, तनक बदन मैं नावत ।
कबहुँ चितै प्रतिबिंब खंभ मैं, लौनी लिए खवावत ॥
दुरि देखति जसुमति यह लीला, हरष अनंद बढ़ावत ।
'सूर' स्याम के बाल-चरित, नित नितही देखत भावत ॥८४॥

राग बिलावल

बलि-बलि जाउँ मधुर सुर गावहु ।
अबकी बार मेरे कुँवर कन्हैया ! नंदहिं नाचि दिखावहु ॥
तारी देहु आपने कर की, परम प्रीति उपजावहु ।
आन जंतु-धुनि सुनि कत डरपत, मो भुज कंठ लगावहु ॥
जनि संका जिय करो लाल मेरे, काहे कों भरमावहु ।
बाहँ उचाइ काल्हि की नाईं, धौरी धेनु बुलावहु ॥
नाचहु नैंकु, जाउँ बलि तेरी, मेरी साध पुरावहु ।
रतन-जटित किंकिनि पग-नूपुर, अपने रंग बजावहु ॥
कनक-खंभ प्रतिबिंबित सिसु इक, लवनी ताहि खवावहु ।
'सूर' स्याम मेरे उर तें कहुँ टारे नैंकु न भावहु ॥८५॥

बाल-छवि-वर्णन— राग बिलावल

बरनौं बाल-बेष मुरारि ।
थकित जित-तित अमर-मुनि-गन, नंद-लाल निहारि ॥
केस सिर बिन बपन के चहुँ दिसा छिटके झारि ।
सीस पर धरि जटा, मनु सिसु-रूप कियौ त्रिपुरारि ॥

तिलक ललित ललाट केसरि-बिंदु सोभाकारि ।
रोप-अरुन तृतीय लोचन, रह्यौ जनु रिपु जारि ॥
कंठ कठुला नील मनि, अंभोज-माल सँवारि ।
गरल ग्रीव, कपाल उर इहिं भाइ भए मदनारि ॥
कुटिल हरि-नख हिऐं हरि के हरपि निरखति नारि ।
ईस जनु रजनीस राख्यौ भाल तें जु उतारि ॥
सदन-रज तन स्याम सोभित, सुभग इहिं अनुहारि ।
मनहुँ अंग-बिभूति-राजित संभु सो मधुहारि ॥
त्रिदस-पति-पति असन कौं, अति जननि सौं करै आरि ।
'सूरदास' बिरंचि जाकौं जपत निज मुख चारि ॥८६॥

राग बिलावल

सखि री, नंद-नंदन देखु ।
धूरि-धूसर जटा जुटली, हरि किऐं हर-भेपु ॥
नील पाट पिरोइ मनि-गन, फनिग धोखैं जाइ ।
खुनखुना कर, हँसत हरि, हर नचत डमरु बजाइ ॥
जलज-माल गुपाल पहिरें, कहा कहौं बनाइ ।
मुंड-माला मनौ हर-गर, ऐसी सोभा पाइ ॥
स्वाति-सुत-माला बिराजत स्याम तन इहिं भाइ ।
मनौ गंगा गौरि-डर हर लई कंठ लगाइ ॥
केहरी-नख निरखि हिरदै, रहीं नारि बिचारि ।
बाल-ससि मनु भाल तें लै, उर धर्‌यौ त्रिपुरारि ॥
देखि अंग अनंग झझक्यौ, नंद-सुत हर जान ।
'सूर' के हिरदै बसो नित, स्याम-सिव कौ ध्यान ॥८७॥

राग नट नारायन

बिहरत बिबिध बालक-संग ।
डगनि डगमग पगनि डोलत, धूरि-धूसर अंग ॥
चलत मग, पग बजति पैजनि, परसपर किलकात ।
मनौ मधुर मराल-छौना बोलि बैन सिहात ।
तनक कटि पर कनक-करधनि, छीन छबि चमकाति ।
मनौ कनक कसौटिया पर, लीक सी लपटाति ।
दुर दसंकत सुभग स्रवननि, जलज जुग डहडहत ।
मनहुँ बासव बलि पठाए, जीव-कवि कछु कहत ॥

ललित लट छिटकाति मुख पर, देति सोभा दून ।
मनु मयंकहिं अंक लीन्हौ सिंहिका के सून ॥
कबहुँ द्वारैं दौरि आवत, कबहुँ नंद-निकेत ।
'सूर' प्रभु कर गहति ग्वालिनि चारु-चुंबन-हेत ॥८८॥

राग नट

खेलत स्याम अपने रँग ।
नँद-लाल निहारि सोभा, निरखि थकित अनंग ॥
चरन की छबि देखि डरप्यौ अरुन, गगन छपाइ ।
जानु करभा की सबै छबि, निदरि, लई छड़ाइ ॥
जुगल जंघनि खंभ-रंभा, नाहिं समसरि ताहि ।
कटि निरखि केहरि लजाने, रहे बन-बन चाहि ॥
हृदय हरि-नख अति बिराजत, छबि न बरनी जाइ ।
मनौ बालक बारिधर नव, चंद दियौ दिखाइ ॥
मुक्त-माल बिसाल उर पर, कछु कहौं उपमाइ ।
मनौ तारा-गननि बेष्टित गगन निसि रह्यौ छाइ ॥
अधर अरुन, अनूप नासा, निरखि जन-सुखदाइ ।
मनौ सुक, फल बिंब कारन, लैन बैठ्यौ आइ ॥
कुटिल अलक बिना बपन के मनौ अलि-सिसु-जाल ।
'सूर' प्रभु की ललित सोभा, निरखि रहीं ब्रज-बाल ॥८९॥

कन-छेदन—

राग धनाश्री

कान्ह कुँवर कौ कनछेदन है, हाथ सुहारी भेली गुर की ।
बिधि बिहँसत, हरि हँसत हेरि हरि, जसुमति की धुकधुकी सु उर की ॥
रोचन भरि लै देत सींक सों, स्रवन-निकट अति ही चातुर की ।
कंचन के द्वै दुर मँगाइ लिए, कहौं कहा छेदनि आतुर की ॥
लोचन भरि-भरि दोऊ माता, कनछेदन देखत जिय मुरकी ।
रोवत देखि जननि अकुलानी, दियौ तुरत नौआ कों घुरकी ॥
हँसत नंद, गोपी सब बिहँसीं, झमकि चलीं सब भीतर दुरकी ।
'सूरदास' नँद करत बधाई, अति आनंद बाल ब्रज-पुर की ॥९०॥

बाल-हठ—

राग बिलावल

मोहन ! आउ तुम्हैं अन्हवाऊँ ।
जमुना तें जल भरि लै आऊँ, ततिहर तुरत चढ़ाऊँ ॥
केसरि कौ उबटनौ बनाऊँ, रचि-रचि मैल छुड़ाऊँ ।
'सूर' कहै, कर नैंकु जसोदा, कैसैंहु पकरि न पाऊँ ॥९१॥

राग आसावरी

जसुमति जबहिं कह्यौ अन्हवावन, रोइ गए हरि लोटत री ।
तेल उबटनौ लै आगैं धरि, लालहिं चोटत-पोटत री ॥
मैं बलि जाउँ न्हाउ जनि मोहन, कत रोवत बिनु काजैं री ।
पाछैं धरि राख्यौ छपाइ कै, उबटन-तेल-समाजैं री ॥
महरि बहुत बिनती करि राखति, मानत नहीं कन्हैया री ।
'सूर' स्याम अतिहीं बिरुझाने, सुर-मुनि अंत न पैया री ॥६२॥

राग सूहौ बिलावल

देखि माई ! हरि जू की लोटनि ।
यह छबि निरखि रही नँदरानी, अँसुवा ढरि-ढरि परत करोटनि ॥
परसत आनन मनु रवि-कुंडल, अंबुज स्रवत सीप-सुत जोटनि ।
चंचल अधर, चरन-कर चंचल, मंचल अंचल गहत बकोटनि ॥
लेति छुड़ाइ महरि कर सों कर, दूरि भई देखति दुरि ओटनि ।
'सूर' निरखि मुसुकाइ जसोदा, मधुर-मधुर बोलति मुख होटनि ॥६३॥

चंद्रमा के लिये हठ— राग कान्हरौ

ठाढ़ी अजिर जसोदा अपने, हरिहिं लिए चंदा दिखरावत ।
रोवत कत बलि जाउँ तुम्हारी, देखौं धौं भरि नैन जुड़ावत ॥
चितै रहे तब आपुन ससि-तन, अपने कर लै-लै जु बतावत ।
मीठौ लगत किधौं यह खाटौ, देखत अति सुंदर मन भावत ॥
मनहीं मन हरि बुद्धि करत हैं, माता सों कहि ताहि मँगावत ।
लागी भूख, चंद मैं खैहौं, देहि देहि रिस करि बिरुझावत ॥
जसुमति कहति कहा मैं कीनौ, रोवत मोहन अति दुख पावत ।
'सूर' स्याम कों जसुमति बोधति, गगन चिरैयाँ उड़त दिखावत ॥६४॥

राग कान्हरौ

किहिं बिधि करि कान्हहिं समुझैहौं ?
मैं ही भूलि चंद दिखरायौ, ताहि कहत मैं खैहौं ॥
अनहोनी कहुँ भई कन्हैया, देखी-सुनी न बात ।
यह तौ आहि खिलौना सबकौ, खान कहत तिहिं तात ॥
यहै देत लवनी नित मोकों, छिन-छिन साँझ-सवारे ।
बार-बार तुम माखन माँगत, देउँ कहाँ तें प्यारे ?
देखत रहो खिलौना चंदा, आरि न करो कन्हाई ।
'सूर' स्याम लिए हँसति जसोदा, नंदहिं कहति बुझाई ॥६५॥

राग धनाश्री

(आछे मेरे) लाल हो, ऐसी आरि न कीजै।
मधु-मेवा-पकवान-मिठाई, जोइ भावै सोइ लीजै॥
सद माखन घृत दह्यौ सजायौ, अरु मीठौ पय पीजै।
पालागौं हठ अधिक करो जनि, अति रिस तें तन छीजै॥
आन वतावति, आन दिखावति, बालक तौ न पतीजै।
खसि-खसि परत कान्ह कनियाँ तें, सुसुकि सुसुकि मन खीजै॥
जल-पुट आनि धर्‌यौ आँगन मैं, मोहन नैंकु तौ लीजै।
'सूर' स्याम हठि चंदहिं माँगै, सु तौ कहाँ तें दीजै॥९६॥

राग कान्हरौ

वार-वार जसुमति सुत बोधति, आउ चंद तोहिं लाल बुलावै।
मधु-मेवा-पकवान-मिठाई, आपुन खैहै, तोहिं खवावै॥
हाथहिं पर तोहिं लीन्हे खेलै, नैकु नहीं धरनी वैठावै।
जल-वासन कर लै जु उठावति, याही मैं तू तन धरि आवै॥
जल-पुट आनि धरनि पर राख्यौ, गहि आन्यौ वह चंद दिखावै।
'सूरदास' प्रभु हँसि मुसुक्याने, वार-वार दोऊ कर नावैं॥९

राग केदारौ

मैया! मैं तौ चंद-खिलौना लैहौं।
जैहौं लोटि धरनि पर अवहीं, तेरी गोद न ऐहौं॥
सुरभी कौ पय पान न करिहौं, वेनी सिर न गुहैहौं।
ह्वैहौं पूत नंद बाबा कौ, तेरौ सुत न कहैहौं॥
आगै आउ, वात सुनि मेरी, वलदेवहिं न जनैहौं।
हँस समुझावति, कहति जसोमति, नई दुलहिया दैहौं॥
तेरी सौं, मेरी सुन मैया! अवहिं बियाहन जैहौं।
'सूरदास' ह्वै कुटिल वराती, गीत सुमंगल गैहौं॥९८॥

राग धनाश्री

लै-लै मोहन! चंदा लै।
कमल नैन वलि जाउँ सुचित ह्वै, नीचैं नैंकु चितै॥
जा कारन तैं सुनि सुत सुंदर, कीन्हीं इती अरै।
सोइ सुधाकर देखि कन्हैया, भाजन माहिं परै॥
नभ तें निकट आनि राख्यौ है, जल-पुट जतन जुगै।
लै अपने कर काढ़ि चंद कौं, जो भावै सो कै॥
गगन-मँडल तें गहि आन्यौ है, पंछी एक पठै।
'सूरदास' प्रभु इती वात कौं, कत मेरौ लाल हठै॥९९॥

कहानी कह कर सुलाना— राग केदारौ

जसुमति लै पलिका पौढ़ावति ।
मेरौ आजु अतिहिं विरुझानौ, यह कहि-कहि मधुरे सुर गावति ॥
पौढ़ि गई हरुऐं करि आपुन, अंग मोरि तव हरि जँभुआने ।
कर सौं ठोंकि सुतहिं दुलरावति, चटपटाइ बैठे अतुराने ॥
पौढ़ो लाल, कथा इक कहिहौं, अति मीठी, स्रवननि कौं प्यारी ।
यह सुनि 'सूर' स्याम मन हरषे, पौढ़ि गए, हँसि देत हुँकारी ॥१००॥

राग केदारौ

सुनि सुत ! एक कथा कहौं प्यारी ।
कमल-नैन मन आनँद उपज्यौ, चतुर-सिरोमनि देत हुँकारी ॥
दसरथ नृपति हुतौ रघुवंसी, ताकैं प्रगट भए सुत चारी ।
तिनमैं मुख्य राम जो कहियत, जनक-सुता ताकी वर नारी ॥
तात-वचन लगि राज तज्यौ तिन,अनुज,घरनि सँग गए वनचारी ।
धावत कनक-मृगा के पाछैं, राजिव-लोचन परम उदारी ॥
रावन हरन सिया कौ कीन्हौ, सुनि नँद-नंदन नींद निवारी ।
चाप-चाप करि उठे 'सूर' प्रभु, लछिमन देहु, जननि भ्रम भारी ॥१०१॥

राग केदारौ

जसुमति मन-मन यहै विचारति ।
झझकि उठ्यौ सोवत हरि अबहीं, कछु पढ़ि-पढ़ि तन-दोष निवारति ॥
खेलत मैं कोउ दीठि लगाई, लै-लै राई-लौन उतारति ।
साँझहिं तें अतिहिं विरुझानौ, चंदहिं देखि करी अति आरति ॥
वार-वार कुलदेव मनावति, दोउ कर जोरि सिरहिं लै धारति ।
'सूरदास' जसुमति नँदरानी, निरखि वदन, त्रयताप विसारति ॥१०२॥

प्रातःकाल होने पर जगाना— राग ललित

नाहिंनै जगाइ सकति, सुनि सुबात सजनी !
अपनै जान अजहुँ कान्ह, मानत है रजनी ॥
जब-जब हौं निकट जाति, रहति लागि लोभा ।
तन की गति विसरि जाति, निरखत मुख-सोभा ॥
वचननि कौं बहुत करति, सोचति जिय ठाढ़ी ।
नैननि न विचारि परत, देखत रुचि बाढ़ी ॥
इहिं विधि वदनारविंद, जसुमति जिय भावै ।
'सूरदास' सुख की रासि, कापै कहि आवै ॥१०३॥

राग बिलावल

जागिए, ब्रजराज कुँवर ! कमल - कुसुम फूले ।
कुमुद - बृंद सँकुचित भए, भृंग लता भूले ।।
तमचुर खग-रोर सुनहु, बोलत बनराई ।
राँभति गो खरिकनि मैं, बछरा हित धाई ।
बिधु मलीन रवि प्रकास गावत नर-नारी ।
'सूर' स्याम प्रात उठो, अंबुज - कर - धारी ।।१०४।।

राग रामकली

प्रात समय उठि, सोवत सुत कौ बदन उघार्‌यौ नंद ।
रहि न सके अतिसय अकुलाने, बिरह निसा के द्वंद ।।
स्वच्छ सेज मैं तें मुख निकसत,गयौ तिमिर मिटि मंद ।
मनु पय-निधि सुर मथत फेन फटि, दयौ दिखाई चंद ।।
धाए चतुर चकोर 'सूर' सुनि, सब सखि-सखा सुछंद ।
रही न सुधि सरीर अरु मन की, पीवत किरनि अमंद ।।१०५।।

राग बिलावल

भोर भऐं निरखत हरि कौ मुख, प्रमुदित जसुमति, हरषित नंद ।
दिनकर-किरन कमल ज्यौं बिकसत, निरखत उर उपजत आनंद ।।
बदन उघारि जगावति जननी, जागहु बलि गई आनँद-कंद ।
मनहुँ मथत सुर सिंधु, फेन फटि, दयौ दिखाई पूरन चंद ।।
जाकौं ईस - सेष - ब्रह्मादिक, गावत नेति - नेति स्रुति छंद ।
सोइ गोपाल ब्रज मैं सुनि 'सूरज', प्रगटे पूरन परमानंद ।।१०६।।

राग ललित

जागिए गोपाल लाल, आनँद-निधि नंद-बाल,
जसुमति कहै बार-बार, भोर भयौ प्यारे ।
नैन कमल-दल बिसाल, प्रीति-बापिका-मराल,
मदन ललित बदन उपर कोटि वारि डारे ।।
उगत अरुन बिगत सर्वरी, ससाँक किरन-हीन,
दीपक सु मलीन, छीन-दुति समूह तारे ।
मनौ ज्ञान-घन-प्रकास, बीते सब भव-बिलास,
आस-त्रास-तिमिर तोप-तरनि-तेज जारे ।।
बोलत खग-निकर मुखर, मधुर होइ प्रतीति सुनो,
परम प्रान - जीवन - धन मेरे तुम बारे ।

मनौ बेद बंदीजन सूत-वृंद मागध-गन,
बिरद बदत जै जै जै जैति कैटभारे।
बिकसत कमलावली, चले प्रपुंज-चंचरीक,
गुंजत कलकोमल धुनि त्यागि कंज न्यारे॥
मानौ बैराग पाइ, सकल सोक-गृह बिहाइ,
प्रेम-मत्त फिरत भृत्य, गुनत गुन तिहारे।
सुनत बचन प्रिय रसाल, जागे अतिसय दयाल,
भागे जंजाल-जाल, दुख-कदंब टारे।
त्यागे भ्रम-फंद-द्वंद निरखि कै मुखारबिंद,
'सूरदास' अति अनंद, मेटे मद भारे॥१०७॥

राग ललित

जागो, जागो हो गोपाल!
नाहिंन इतौ सोइयत सुनि सुत, प्रात परम सुचि काल॥
फिरि-फिरि जात निरखि मुख छिन-छिन, सब गोपनि के बाल।
बिन बिकसे कल कमल-कोष तें, मनु मधुपनि की माल॥
जो तुम मोहिं न पत्याहु 'सूर' प्रभु, सुंदर स्याम तमाल।
तौ तुमहीं देखो आपुन, तजि निद्रा नैन बिसाल॥१०८॥

राग बिलावल

नंद को लाल उठत जब सोइ।
निरखि मुखारबिंद की सोभा, कहि, काके मन धीरज होइ?
मुनि-मन हरत,जुवति-जन केतिक,रतिपति-मान जात सब खोइ।
ईपद हास दंत-दुति बिगसति, मानिक-मोती धरे जनु पोइ॥
नागर नवल कुँवर वर सुंदर, मारग जात लेत मन गोइ।
'सूरदास' प्रभु मोहनि-मूरति, ब्रजवासी मोहे सब लोइ॥१०९॥

कलेवा— राग भैरव

उठिए स्याम! कलेऊ कीजै। मनमोहन-मुख निरखत जीजै॥
खारिक, दाख, खोपरा, खीरा। केरा, आम, ऊख-रस, सीरा॥
श्रीफल, मधुर चिरौंजी आनी। सफरी, चिउरा, अरुन खुबानी॥
घेवर, फेनी और सुहारी। खोवा सहित खाहु, बलिहारी॥
रचि पिराक लाडू दधि आनौं। तुमको भावत पुरी सँधानौं॥
नव तमोल रचि तुमहिं खवावौं। 'सूरदास' पनवारौ पावौं॥११०॥

राग बिलावल

कमल-नैन हरि ! करो कलेवा ।
माखन-रोटी, सद्य जम्यौ दधि, भाँति-भाँति के मेवा ॥
खारिक, दाख, चिरौंजी, किसमिस, उज्वल गरी बदाम ।
सफरी, सेव, छुहारे, पिस्ता, जे तरबूजा नाम ॥
अरु मेवा बहु भाँति-भाँति हैं, षटरस के मिष्टान्न ।
'सूरदास' प्रभु करत कलेवा, रीझे स्याम सुजान ॥१११॥

खेल-कूद—

राग सारंग

खेलन जाहु बाल सब टेरत ।
यह सुनि कान्ह भए अति आतुर, द्वारैं तन फिरि हेरत ॥
बार-बर हरि मातहिं बूझत, कहि चौगान कहाँ है ।
दधि-मथनी के पाछैं देखो, लै मैं धर्यौ तहाँ है ॥
लै चौगान-बटा अपने कर, प्रभु आए घर बाहर ।
'सूर' स्याम पूछत सब ग्वालनि, खेलोगे किहिं ठाहर ॥११२॥

राग सारंग

खेलत बनै घोस निकास ।
सुनहु स्याम ! चतुर सिरोमनि, इहाँ है घर पास ॥
कान्ह हलधर वीर दोऊ, भुजा बल अति जोर ।
सुबल, श्रीदामा, सुदामा, वे भए इक ओर ॥
और सखा बँटाइ लीन्हे, गोप-बालक-बृंद ।
चले ब्रज की खोरि खेलत, अति उमँगि नँद-नंद ॥
बटा धरनी डारि दीनौ, लै चले ढरकाइ ।
आपु अपनी घात निरखत, खेल जम्यौ बनाइ ॥
सखा जीतत स्याम जाने, सब करी कछु पेल ।
'सूरदास' कहत सुदामा, कौन ऐसौ खेल ॥११३॥

राग सारंग

खेलत मैं को काकौ गुसैया ।
हरि हारे जीते श्रीदामा, बरबस हीं कत करत रिसैया ॥
जाति-पाँति हमतें बड़ नाहीं, नाहीं बसत तुम्हारी छैयाँ ।
अति अधिकार जनावत यातें, जातें अधिक तुम्हारैं गैयाँ !
रूठि करै, तासों को खेलै, रहे बैठि जहँ-तहँ सब ग्वैयाँ ।
'सूरदास' प्रभु खेल्यौइ चाहत, दाउँ दियौ करि नंद-दुहैयाँ ॥११४॥

राग रामकली

खेलत स्याम ग्वालनि संग ।
सुवल, हलधर अरु श्रीदामा, करत नाना रंग ॥
हाथ तारी देत भाजत, सबै करि-करि होड़ ।
बरजै हलधर, स्याम ! तुम जनि चोट लागै गोड़ ॥
तब कह्यौ मैं दौ जानत, बहुत बल मो गात ।
मेरी जोरी है श्रीदामा, हाथ मारे जात ॥
उठे बोलि तबै श्रीदामा, जाहु तारी मारि ।
आगैं हरि पाछैं श्रीदामा, धर्यौ स्याम हँकारि ॥
जानिकै मैं रह्यौ ठाढ़ौ, छुवत कहा जु मोहिं ।
'सूर' हरि खीझत सखा सौं, मनहिं कीन्हौ कोह ॥११५॥

राग गौरी

सखा कहत हैं स्याम खिसाने ।
आपुहि आपु वलकि भए ठाढ़े, अब तुम कहा रिसाने ?
बीचहिं बोलि उठे हलधर तब, याकैं माइ न बाप ।
हारि-जीत कछु नैंकु न समुझत, लरिकनि लावत पाप ॥
आपुन हारि सखनि सौं झगरत, यह कहि दियौ पठाइ ।
'सूर' स्याम उठि चले रोइ कै, जननी पूछति धाइ ॥११६॥

राग गौरी

मैया ! मोहिं दाऊ बहुत खिझायौ ।
मोसौं कहत मोल कौ लीन्हौ, तू जसुमति कब जायौ ?
कहा करौं इहि रिस के मारैं, खेलन हौं नहिं जात ।
पुनि-पुनि कहत कौन है माता, को है तेरौ तात ॥
गोरे नंद, जसोदा गोरी, तू कत स्यामल गात ।
चुटकी दै-दै ग्वाल नचावत, हँसत सबै मुसुकात ॥
तू मोहीं कौं मारन सीखी, दाउहिं कबहुँ न खीझै ।
मोहन-मुख रिस की ये बातैं, जसुमति सुनि-सुनि रीझै ॥
सुनहु कान्ह ! बलभद्र चबाई, जनमत ही कौ धूत ।
'सूर' स्याम मोहिं गोधन की सौं, हौं माता, तू पूत ॥११७॥

राग नट

मोहन ! मानि मनायौ मेरौ ।
हौं बलिहारी नंद-नँदन की, नैकु इतै हँसि हेरौ ॥
कारौ कहि-कहि तोहिं खिजावत, बरजत खरौ अनेरौ ।
इंद्र-नील मनि तैं तन सुंदर, कहा कहै बल चेरौ ॥

न्यारौ जूथ हाँकि लै अपनौ, न्यारी गाइ निबेरौ।
मेरौ सुत सरदार सबनि कौ, बहुतै कान्ह बड़ेरौ॥
बन मैं जाइ करो कौतूहल, यह अपनौ है खेरौ।
'सूरदास' द्वारैं गावत है, बिमल-बिमल जस तेरौ॥११८॥

राग गौरी

खेलन अब मेरी जाइ बलैया।
जबहिं मोहिं देखत लरिकनि सँग, तबहिं खिझत बल भैया॥
मोसों कहत तात बसुदेव कौ, देवकि तेरी मैया।
मोल लियौ कछु दै करि तिनकों, करि-करि जतन बढ़ैया॥
अब बाबा कहि कहत नंद सों, जसुमति सों कहै मैया।
ऐसै कहि सब मोहिं खिझावत, तब उठि चल्यौ खिसैया॥
पाछैं नंद सुनत हे ठाढ़े, हँसत-हँसत उर लैया।
'सूर' नंद बलरामहिं धिरयौ, तब मन हरष कन्हैया॥११९॥

राग रामकली

खेलन चलो बाल गोविंद !
सखा प्रिय द्वारैं बुलावत, घोष-बालक-बृंद॥
तृषित हैं सब दरस-कारन, चतुर चातक दास।
बरषि छबि नव बारिधर तन, हरहु लोचन-प्यास॥
बिनय बचननि सुनि कृपानिधि, चले मनोहर चाल।
ललित लघु-लघु चरन-कर, उर-बाहु-नैन-बिसाल॥
अजिर पद-प्रतिबिंब राजत, चलत उपमा-पुंज।
प्रति चरन मनु हेम बसुधा, देति आसन कंज॥
'सूर' प्रभु की निरखि सोभा, रहे सुर अवलोकि।
सरद-चंद चकोर मानौ, रहे थकित बिलोकि॥१२०॥

राग बिहागरौ

खेलन दूरि जात कत कान्हा ?
आजु सुन्यौ मैं हाऊ आयौ, तुम नहिं जानत नान्हा॥
इक लरिका अबहीं भजि आयौ, रोवत देख्यौ ताहि।
कान तोरि वह लेत सबनि के, लरिका जानत जाहि॥
चलो न, बेगि सवारैं जैयै, भाजि आपनै धाम।
'सूर' स्याम यह बात सुनतही, बोलि लिए बलराम॥१२१॥

बाल-चरित्र—

राग नट

हरि के बाल-चरित अनूप।
निरखि रहीं ब्रजनारि इकटक अंग-अँग-प्रति रूप॥
बिथुरि अलकैं रहीं मुख पर बिनहिं बपन सुभाइ।
देखि कंजनि चंद के बस मधुप करत सहाइ॥
सजल लोचन चारु नासा परम रुचिर बनाइ।
जुगल खंजन करत अविनति, बीच कियौ बनराइ॥
अरुन अधरनि दसन झाईं, कहौं उपमा थोरि।
नील पुट बिच मनौ मोती धरे बंदन बोरि॥
सुभग बाल मुकुंद की छबि बरनि कापै जाइ।
भ्रकुटि पर मसि-बिंदु सोहै, सकै 'सूर' न गाइ॥१२२॥

राग रामकली

जसुमति कान्हहिं यहै सिखावति।
सुनहु स्याम! अब बड़े भए तुम, कहि स्तन-पान छुड़ावति॥
ब्रज-लरिका तोहिं पीवत देखत, हँसत, लाज नहिं आवति।
जैहैं बिगरि दाँत ये आछे, तातैं कहि समुझावति॥
अजहूँ छाँड़ि, कह्यौ करि मेरौ, ऐसी बात न भावति।
'सूर' स्याम यह सुनि मुसुक्याने, अंचल मुखहिं लुकावत॥१२३॥

राग सारंग

नंद बुलावत हैं गोपाल।
आवहु बेगि बलैया लेउँ हौं, सुंदर नैन बिसाल॥
परस्यौ थार धर्‌यौ मग जोवत, बोलति बचन-रसाल।
भात सिरात, तात दुख पावत, बेगि चलो मेरे लाल!
हौं वारी नान्हे पाइनि की, दौरि दिखावहु चाल।
छाँड़ि देहु तुम लाल! अटपटी, यह गति-मंद-मराल॥
सो राजा जो आगमन पहुँचै, 'सूर' सु भवन उताल।
जो जैहैं बलदेव पहिलैं ही, तो हँसिहैं सब ग्वाल॥१२४॥

राग सारंग

जेंवत कान्ह नंद इकठौरे।
कछुक खात लपटात दोउ कर बाल-केलि अति भोरे॥
बरा कौर मेलत मुख भीतर, मिरचि दसन टकटौरे।
तीछन लगी, नैन भरि आए, रोवत बाहर दौरे॥
फूँकति बदन रोहिनी ठाढ़ी, लिए लगाइ अँकोरे।
'सूर' स्याम कों मधुर कौर दै, कीन्हे तात निहोरे॥१२५॥

राग कान्हरौ

साँझ भई घर आवहु प्यारे।
दौरत कहा चोट लगिहै कहुँ, पुनि खेलिहो सकारे॥
आपुहिं जाइ बाहँ गहि ल्याईं, खेह रही लपटाइ।
धूरि झारि तातौ जल ल्याईं, तेल परसि अन्हवाइ॥
सरस बसन तन पौंछि स्याम कौं, भीतर गईं लिवाइ।
'सूर' स्याम कछु करो बियारी, पुनि राखौं पौढ़ाइ॥१२६॥

राग बिहागरौ

बल-मोहन दोउ करत बियारी।
प्रेम सहित दोउ सुतनि जिवावतिं, रोहिनी अरु जसुमति महतारी॥
दोउ भैया मिलि खात एक सँग, रतन-जटित कंचन की थारी।
आलस सों कर कौर उठावत, नैननि नींद झमकि रही भारी॥
दोउ माता निरखत आलस मुख, छवि पर तन-मन डारतिं वारी।
बार-बार जमुहात 'सूर' प्रभु, इहिं उपमा कवि कहै कहा री!॥१२७॥

राग केदारौ

कीजै पान लला रे! यह लै आई दूध जसोदा मैया।
कनक-कटोरा भरि लीजै, यह पय पीजै, अति सुखद कन्हैया॥
आछे औट्यो मेलि मिठाई, रुचि करि अँचवत क्यौं न नन्हैया।
बहु जतननि ब्रजराज लड़ैते, तुम कारन राख्यौ बलभैया॥
फूँकि-फूँकि जननी पय प्यावति, सुख पावति जो उर न समैया।
'सूरज' स्याम-राम पय पीवत, दोऊ जननी लेतिं बलैया॥१२८॥

बल-मोहन दोऊ अलसाने।
कछु-कछु खाइ दूध अँचयौ, तब जम्हात जननी जाने॥
उठहु लाल! कहि मुख पखरायौ, तुमकों लै पौढ़ाऊँ।
तुम सोवो मैं तुम्हें सुवाऊँ, कछु मधुरे सुर गाऊँ॥
तुरत जाइ पौढ़े दोउ भैया, सोवत आई निंद।
'सूरदास' जसुमति सुख पावति, पौढ़े बालगोविंद॥१२९॥

राग सूहौ

माखन बाल गोपालहिं भावै।
भूखे छिन न रहत मनमोहन, ताहि बदौं जो गहरु लगावै॥
आनि मथानी दह्यौ बिलोवौं, जौ लगि लालन उठन न पावै।
जागत ही उठि रारि करत है, नहिं मानै जो इंद्र मनावै॥
हौं यह जानति बानि स्याम की, अँखियाँ मीचे बदन चलावै।
नंद-सुवन की लगौं बलैया, यह जूठनि कछु 'सूरज' पावै॥१३

राग बिलावल

भोर भयौ जागे नँदनंदन । संग सखा ठाढ़े जग-बंदन ॥
सुरभी पय हित बच्छ पियावैं । पंछी तरु तजि दुहुँ दिसि धावैं ॥
अरुन गगन तमचुरनि पुकार्‌यौ । सिथिल धनुप रति-पति गहि डार्‌यौ ॥
निसि निघटी रवि-रथ रुचि साजी । चंद मलिन चकई रति-राजी ॥
कुमुदिनि सकुची, वारिज फूले । गुंजत फिरत अली-गन भूले ॥
दरसन देहु मुदित नर नारी । 'सूरज' प्रभु दिन देव मुरारी॥१३१॥

राग सारंग

न्हात नंद सुधि करी स्याम की, ल्यावहु बोलि कान्ह बलराम ।
खेलत बड़ी बार कहुँ लाई, ब्रज-भीतर, काहू के धाम ॥
मेरे संग आइ दोउ बैठैं, उन बिनु भोजन कौने काम ।
जसुमति सुनत चली अति आतुर, ब्रज-घर-घर टेरति लै नाम ॥
आजु अबेर भई कहुँ खेलत, बोलि लेहु हरि कों कोउ बाम ।
ढूँढ़ि फिरी नहिं पावति हरि कों, अति अकुलानी, तावति घाम ॥
बार - बार पछिताति जसोदा, बासर बीत गए जुग जाम ।
'सूर' स्याम कों कहूँ न पावति, देखे बहु बालक के ठाम ॥१३२॥

राग नटनारायन

हरि कों टेरति है नँदरानी ।
बहुत अबार भई कहँ खेलत, रहे मेरे सारँग-पानी ?
सुनतहिं टेर, दौरि तहँ आए, कब के निकसे लाल ।
जेंवत नहीं नंद तुम्हरे बिनु, बेगि चलो, गोपाल !
स्यामहिं ल्याई महरि जसोदा, तुरतहिं पाइँ पखारे ।
'सूरदास' प्रभु संग नंद के बैठे हैं दोउ बारे ॥१३३॥

राग सारंग

जेंवत स्याम नंद की कनिया ।
कछुक खात, कछु धरनि गिरावत, छबि निरखति नँद-रनियाँ ॥
बरी, बरा, बेसन, बहु भाँतिनि, व्यंजन बिविध अगनियाँ ।
डारत, खात, लेत अपने कर, रुचि मानत दधि दोनियाँ ॥
मिस्री, दधि, माखन मिस्रित करि, मुख नावत छबि धनियाँ ।
आपुन खात, नंद-मुख नावत, सो छबि कहत न बनियाँ ॥
जो रस नंद-जसोदा बिलसत, सो नहिं तिहूँ भुवनियाँ ।
भोजन करि नँद अचमन लीन्हौ, माँगत 'सूर' जुठनिया ॥१३४॥

राग कान्हरौ

बोलि लेहु हलधर भैया कों।
मेरे आगे खेल करो कछु, सुख दीजै मैया कों॥
मैं मूँदौं हरि आँखि तुम्हारी, बालक रहैं लुकाई।
हरषि स्याम सब सखा बुलाए, खेलन आँखि मुँदाई॥
हलधर कह्यौ आँखि को मूँदै, हरि कह्यौ मातु जसोदा।
'सूर' स्याम लए जननि खिलावति, हरष सहित मन मोदा॥१३५॥

राग गौरी

हरि तब अपनी आँखि मुँदाई।
सखा सहित बलराम छपाने, जहँ-तहँ गए भगाई॥
कान लागि कह्यौ जननि जसोदा, वा घर मैं बलराम।
बलदाऊ कों आवन दैहौ, श्रीदामा सों काम॥
दौरि-दौरि बालक सब आवत, छुवत महरि कौ गात।
सब आए रहे सुबल श्रीदामा, हारे अब कैं तात॥
सोर पारि हरि सुबलहिं धाए, गह्यौ श्रीदामा जाइ।
दै-दै सौहैं नंद बबा की, जननी पै लै आइ॥
हँसि-हँसि तारी देत सखा सब, भए श्रीदामा चोर।
'सूरदास' हँसि कहति जसोदा, जीत्यौ है सुत मोर॥१३६॥

राग केदारौ

पौढ़िए मैं रचि सेज बिछाई।
अति उज्वल है सेज तुम्हारी, सोवत मैं सुखदाई॥
खेलत तुम निसि अधिक गई, सुत! नैननि नींद झँपाई।
बदन जँभात, अंग ऐंडावत, जननि पलोटत पाई॥
मधुरै सुर गावत केदारौ, सुनत स्याम चित लाई।
'सूरदास' प्रभु नंद-सुवन कों नींद गई तब आई॥१३७॥

राग कान्हरौ

आवहु कान्ह! साँझ की बेरिया।
गाइनि माँझ भए हौ ठाढ़े, कहति जननि, यह बड़ी कुबेरिया॥
लरिकाई कहुँ नैकु न छाँड़त, सोइ रहौ सुथरी सेजरिया।
आए हरि यह बात सुनतहीं, धाइ लए जसुमति महतरिया॥
लै पौढ़ी आँगन हीं सुत कों, छिटकि रही आछी उजियरिया।
'सूर' स्याम कछु कहत-कहत ही, बस करि लीन्हे आइ निंदरिया॥१३८॥

राग कान्हरौ

आँगन मैं हरि सोइ गए री।
दोउ जननी मिलि कै, हरुएँ करि, सेज सहित तब भवन लए री ॥
नैंकु नहीं घर मैं बैठत हैं, खेलहिं के अब रंग रए री।
इहिं विधि स्याम कबहुँ नहिं सोए, बहुत नींद के बसहिं भए री ॥
कहति रोहिनी सोवन देहु न, खेलत-दौरत हारि गए री।
'सूरदास' प्रभु कौ मुख निरखत, हरखत जिय नित नेह नए री ॥१३९॥

माटी-भक्षण—

राग बिलावल

खेलत स्याम पौरि के बाहर, ब्रज लरिका सँग जोरी।
तैसेई आपु, तैसेई लरिका, अज्ञ सबनि मति थोरी ॥
गावत, हाँक देत, किलकारत, दुरि देखति नँदरानी।
अति पुलकित गदगद मुख बानी, मन-मन महरि सिहानी ॥
माटी लै मुख मेलि दई हरि, तबहिं जसोदा जानी।
साँटी लिए दौरि भुज पकर्‌यौ, स्याम लँगरई ठानी ॥
लरिकनि कों तुम सब दिन झुठवत, मोसों कहा कहोगे।
मैया मैं माटी नहिं खाई, मुख देखैं निबहोगे ॥
बदन उघारि दिखायौ त्रिभुवन, बनघन-नदी-सुमेर।
नभ-ससि-रवि मुख भीतर हीं सब सागर-धरनी-फेर ॥
यह देखत जननी मन व्याकुल, बालक-मुख कहा आहि।
नैन उघारि, बदन हरि मूँद्यौ, माता-मन अवगाहि ॥
झूठैं लोग लगावत मोकौं, माटी मोहिं न सुहावै।
'सूरदास' तब कहति जसोदा, ब्रज-लोगनि यह भावै ॥१४०॥

राग रामकली

मो देखत जसुमति तेरे ढोटा, अब हीं माटी खाई।
यह सुनि कै रिस करि उठि धाई, बाहँ पकरि लै आई ॥
इक कर सौं भुज गहि गाढ़े करि, इक कर लीन्हीं साँटी।
मारति हौं तोहिं अबहिं कन्हैया! बेगि न उगिलै माटी ॥
ब्रज-लरिका सब तेरे आगैं, झूठी कहत बनाइ।
मेरे कहैं नहीं तू मानति, दिखरावौं मुख बाइ ॥
अखिल ब्रह्मंड-खंड की महिमा, दिखराई मुख माँहि।
सिंधु-सुमेर-नदी-बन-पर्वत चकित भई मन चाहि ॥
कर तें साँटि गिरत नहिं जानी, भुजा छाँड़ि अकुलानी।
'सूर' कहै जसुमति मुख मूँदौ, बलि गई सारँगपानी ॥१४१॥

राग सोरठ

कहत नंद जसुमत सौं बात।
कहा जानिऐ, कह तैं देख्यौ, मेरे कान्ह रिसात॥
पाँच बरष कौ मेरौ नन्हैया, अचरज तेरी बात।
बिनहीं काज साँटि लै धावति, ता पाछैं बिललात॥
कुसल रहैं बलराम-स्याम दोउ, खेलत-खात-अन्हात।
'सूर' स्याम कौं कहा लगावति, बालक कोमल-गात॥१४२॥

माखन-चोरी

गोपियों के यहाँ माखन-चोरी को जाना—

राग गौरी

मैया री! मोहिं माखन भावै।
जो मेवा पकवान कहति तू, मोहिं नहीं रुचि आवै॥
ब्रज-जुवती इक पाछैं ठाढ़ी, सुनत स्याम की बात।
मन-मन कहति कबहुँ अपने घर, देखौं माखन खात॥
बैठैं जाइ मथनियाँ के ढिग, मैं तब रहौं छपानी।
'सूरदास' प्रभु अंतरजामी, ग्वालिनि मन की जानी॥१४३॥

राग गौरी

गए स्याम तिहिं ग्वालिनि कै घर।
देख्यौ द्वार नहीं कोउ, इत-उत चितै, चले तब भीतर॥
हरि आवत गोपी जब जान्यौ, आपुन रही छपाइ।
सूनैं सदन मथनियाँ कै ढिग, बैठि रहे अरगाइ॥
माखन भरी कमोरी देखत, लै-लै लागे खान।
चितै रहे मनि-खंभ-छाहँ-तन, तासौं करत सयान॥
प्रथम आजु मैं चोरी आयौ, भलौ बन्यौ है संग।
आपु खात, प्रतिबिंब खवावत, गिरत कहत, का रंग?
जो चाहौ सब देउँ कमोरी, अति मीठौ कत डारत।
तुमहिं देत मैं अति सुख पायौ, तुम जिय कहा बिचारत?
सुनि-सुनि बात स्याम के मुख की, उमँगि हँसी ब्रजनारी।
'सूरदास' प्रभु निरखि ग्वालि-मुख, तब भजि चले मुरारी॥१४४॥

राग बिलावल

प्रथम करी हरि माखन-चोरी ।
ग्वालिनि-मन-इच्छा करि पूरन, आपु भजे ब्रज-खोरी ॥
मन मैं यहै विचार करत हरि, ब्रज घर-घर सब जाउँ ।
गोकुल जनम लियौ सुख-कारन, सबकैं माखन खाउँ ॥
बाल-रूप जसुमति मोहिं जानै, गोपिनि मिलि सुख भोग ।
'सूरदास' प्रभु कहत प्रेम सों, ये मेरे ब्रज-लोग ॥१४५॥

राग रामकली

करैं हरि ग्वाल संग विचार ।
चोरि माखन खाहु सब मिलि, करहु बाल-बिहार ॥
यह सुनत सब सखा हरषे, भली कही कन्हाइ ।
हँसि परस्पर देत तारी, सौंह करि नँदराइ ॥
कहाँ तुम यह बुद्धि पाई, स्याम चतुर सुजान ।
'सूर' प्रभु मिलि ग्वाल-बालक, करत हैं अनुमान ॥१४६॥

राग गौरी

सखा सहित गए माखन-चोरी ।
देख्यौ स्याम गवाच्छ-पंथ ह्वै, मथति एक दधि भोरी ॥
हेरि मथानी धरी माट तें, माखन हौ उतरात ।
आपुन गई कमोरी माँगन, हरि पाई ह्याँ घात ॥
पैठे सखनि सहित घर सूने, दधि-माखन सब खाए ।
छूछी छाँड़ि मटुकिया दधि की, हँसि सब बाहिर आए ॥
आइ गई कर लिए कमोरी, घर तें निकसे ग्वाल ।
माखन कर, दधि मुख लपटानौ, देखि रही नँदलाल ॥
कहँ आए ब्रज-बालक सँग लै, माखन मुख लपटान्यौ ।
खेलत तें उठि भज्यौ सखा यह, इहिं घर आइ छपान्यौ ॥
भुज गहि लियौ कान्ह एक बालक, निकसे ब्रज की खोरि ।
'सूरदास' ठगि रही ग्वालिनी, मन हरि लियौ अँजोरि ॥१४७॥

चकित भई ग्वालिनि-तन हेरौ ।
माखन छाँड़ि गई मथि वैसैंहि, तब तें कियौ अबेरौ ॥
देखै जाइ मटुकिया रीती, मैं राख्यौ कहुँ हेरि ।
चकित भई ग्वालिनि मन अपने, ढूँढ़ति घर फिरि-फेरि ॥
देखति पुनि-पुनि घर के बासन, मन हरि लियौ गोपाल ।
'सूरदास' रस भरी ग्वालिनी, जानै हरि कौ ख्याल ॥१४८॥

राग बिलावल

ब्रज घर-घर प्रगटी यह बात ।
दधि-माखन चोरी करि लै हरि, ग्वाल-सखा सँग खात ॥
ब्रज-बनिता यह सुनि मन हरषित, सदन हमारे आवैं ।
माखन खात अचानक पावैं, भुज हरि उरहिं छुवावैं ॥
मनहीं मन अभिलाष करतिं सब, हृदय धरतिं यह ध्यान ।
'सूरदास' प्रभु कों घर तें लै, दैहौं माखन खान ॥१४६॥

राग कान्हरौ

चली ब्रज घर-घरनि यह बात ।
नंद-सुत, सँग सखा लीन्हे, चोरि माखन खात ॥
कोउ कहति, मेरे भवन भीतर, अबहिं पैठे धाइ ।
कोउ कहति, मोहिं देखि द्वारैं, उतहिं गए पराइ ॥
कोउ कहति, किहिं भाँति हरि कों देखौं अपने धाम ।
हेरि माखन देउँ आछौ, खाइ जितनौ स्याम ॥
कोउ कहति, मैं देखि पाऊँ, भरि धरौं अँकवारि ।
कोउ कहति, मैं बाँधि राखौं, को सकै निरवारि ॥
'सूर' प्रभु के मिलन कारन, करतिं बुद्धि बिचार ।
जोरि कर बिधि कों मनावतिं, पुरुष नंद-कुमार ॥१५०॥

राग गौरी

देखि फिरे हरि ग्वाल दुवारैं ।
तब इक बुद्धि रची अपने मन, गए नाँधि पिछवारैं ॥
सूने भवन कहूँ कोउ नाहीं, मनु याही कौ राज ।
भाँड़े धरत, उघारत, मूँदत, दधि माखन के काज ॥
रैनि जमाइ धर्यौ हो गोरस, पर्यौ स्याम के हाथ ।
लै-लै खात अकेले आपुन, सखा नहीं कोउ साथ ॥
आहट सुनि जुवती घर आई, देख्यौ नंदकुमार ।
'सूर' स्याम मंदिर अँधियारे, निरखति बारंबार ॥१५१॥

राग गौरी

स्याम ! कहा चाहत से डोलत ?
पूछें तें तुम बदन दुरावत, सूधे बोल न बोलत ॥
पाए आइ अकेले घर मैं, दधि-भाजन मैं हाथ ।
अब तुम जाकौं नाउँ लेउगे, नाहिंन कोऊ साथ ॥

मैं जान्यौ यह मेरौ घर है, ता धोखे मैं आयौ।
देखत हौं गोरस मैं चींटी, काढ़न कों कर नायौ॥
सुनि मृदु बचन,निरखि मुख-सोभा,ग्वालिनि मुरि मुसुकानी।
'सूर' स्याम तुम हो अति नागर, बात तिहारी जानी॥१५२॥

राग गौरी

आपु गए हरुएँ सूने घर।
सखा सबै बाहिर ही छाँड़े, देख्यौ दधि-माखन हरि भीतर॥
तुरत मथ्यौ दधि-माखन पायौ, लै-लै खात, धरत अधरनि पर।
सैन देइ सब सखा बुलाए, तिनहिं देत भरि-भरि अपने कर॥
छिटकि रहीं दधि-बूँद हृदय पर,इत-उत चितवत करि मन मैं डर।
उठत ओट लै लखत सबनि कों, पुनि लै खात लेत ग्वालनि बर॥
अंतर भई ग्वालि यह देखति,मगन भई, अति उर आनँद भरि।
'सूर' स्याम मुख निरखि थकित भई,कहत न बनै,रही मन दै हरि॥१५३॥

राग धनाश्री

गोपाल दुरे हैं माखन खात।
देखि सखी! सोभा जु बनी है, स्याम मनोहर गात॥
उठि, अवलोकि ओट ठाढ़े ह्वै, जिहिं बिधि हैं लखि लेत।
चकित नैन चहूँ दिसि चितवत, और सखनि कों देत॥
सुंदर कर आनन समीप, अति राजत इहिं आकार।
जलरुह मनौ बैर बिधु सों तजि, मिलत लए उपहार॥
गिरि-गिरि परत बदन तें उर पर, हैं दधि-सुत के बिंदु।
मानहुँ सुभग सुधाकन बरषत, प्रियजन आगम इंदु॥
बाल-बिनोद बिलोक 'सूर' प्रभु सिथिल भईं ब्रजनारि।
फुरै न बचन बरजिबे कारन, रहीं बिचारि-बिचारि॥१५४॥

राग सारंग

माई, हौं तकि लागि रही।
जब घर तें माखन लै निकस्यौ, तब मैं बाहँ गही॥
तब हँसि कै मेरौ मुख चितयौ, मीठी बात कही।
रही ठगी, चेटक सौ लाग्यौ, परि गई प्रीति सही॥
बैठो कान्ह! जाउँ बलिहारी, ल्याउँ और दही।
'सूर' स्याम पै ग्वालि सयानी सरबस दै निबही॥१५५॥

राग सारंग

ग्वालिनि जो घर देखै आइ।

माखन खाइ चोराइ स्याम सब, आपुन रहे छपाइ॥
ठाढ़ी भई मथनियाँ के ढिग, रीती परी कमोरी।
अबहिं गई,आई इनि पाइनि,लै गयौ को करि चोरी?
भीतर गई, तहाँ हरि पाए, स्याम रहे गहि पाइ।
'सूरदास' प्रभु ग्वालिनि आगैं, अपनौ नाम सुनाइ॥१५६॥

राग कल्यान

माखन चोराइ बैठ्यौ, तौलौं गोपी आई।
देखे तब बोल्यौ कान्ह, उतर यौं बनाई॥
आँखैं भरि लीनीं, उराहनौ दैन लाग्यौ।
तेरौ री सुवन मेरी मुरली लै भाज्यौ॥
दै री मोकौं ल्याइ बेनु, कहि, कर गहि रोवै।
ग्वालिनी डराति जियहिं, सुनै जनि जसोवै॥
तू जो कह्यौ ऐसौ बेनु, इहाँ नाहिं तेरौ।
मुरली मैं जीवन-प्रान बसत अहै मेरौ॥
मेवा – मिष्टान और बंसी इक दीनी।
लागी तिय चरन, औ बलैया - झुकि लीनी॥१५७॥

राग धनाश्री

चोरी करत कान्ह धरि पाए।

निसि-बासर मोहिं बहुत सतायौ, अब हरि हाथहिं आए॥
माखन-दधि मेरौ सब खायौ, बहुत अचगरी कीन्ही।
अब तौ घात परे हौ लालन! तुम्हें भलैं मैं चीन्ही॥
दोउ भुज पकरि, कह्यौ कहँ जैहौ, माखन लेउँ मँगाइ।
तेरी सौं मैं नैकुँ न खायौ, सखा गए सब खाइ॥
मुख तन चितै, बिहँसि हरि दीन्हौ, रिस तब गई बुझाइ।
लियौ स्याम उर लाइ ग्वालिनी, 'सूरदास' बलि जाइ॥१५८॥

राग सारंग

जानि जु पाए हौ हरि नीकें।

चोरि-चोरि दधि-माखन मेरौ, नित प्रति गीधि रहे हौ छीकैं॥
रोक्यौ भवन-द्वार ब्रज-सुंदरि, नूपुर मूँदि अचानक ही कैं।
अब कैसैं जियतु अपनैं बल, भाजन भाँजि, दूध दधि पी कैं?
'सूरदास' प्रभु भलैं परे फँद, देउँ न जान भावते जी कैं।
भरि गंडूष, छिरकि दै नैननि, गिरिधर भाजि चले दै कीकैं॥१५९॥

राग रामकली

माखन-चोर री मैं पायौ ।
बहुत दिवस मैं कौरैं लागी, मेरी घात न आयौ ॥
नित प्रति रीती देखि कमोरी, मोहिं अति लगत झुँझायौ ।
तब मैं कह्यौ, जानि हौं पाई कौन चोर है आयौ ॥
जब कर सों कर गह्यौ, कह्यौ तब, मैं नहिं माखन खायौ ।
बिहँसत उघरि गईं दँतियाँ, लै 'सूर' स्याम उर लायौ ॥१६०॥

राग नट

देखी ग्वालि जमुना जात ।
आपु ता घर गए पूछत, कौन है, कहि बात ॥
जाइ देखे भवन भीतर, ग्वाल-बालक दोइ ।
भीर देखत अति डराने, दुहुँनि दीन्हौ रोइ ॥
ग्वाल के काँधैं चढ़े तब, लिए छींके उतारि ।
दह्यौ-माखन खात सब मिलि, दूध दीन्हौ डारि ॥
बच्छ लै सब छोरि दीन्हे, गए बन समुहाइ ।
छिरकि लरिकनि मही सों भरि, ग्वाल दए चलाइ ॥
देखि आवत सखी घर कौं, सखिन कह्यौ जु दौरि ।
आनि देखे स्याम घर मैं, भई ठाढ़ी पौरि ॥
प्रेम अंतर, रिस भरे मुख, जुवति बूझति बात ।
चितै मुख तन सुधि बिसारी, कियौ उर नख-घात ॥
अतिहिं रस-बस भई ग्वालिनि, गेह देह बिसारि ।
'सूर' प्रभु भुज गहे ल्याई, महरि पै अनुसारि ॥१६१॥

गोपियों का उरहना—

राग गौरी

जो तुम सुनहुँ जसोदा गोरी ।
नंद-नँदन मेरे मंदिर मैं आजु करन गए चोरी ॥
हौं भई जाइ अचानक ठाढ़ी, कह्यौ भवन मैं को री ।
रहे छपाइ, सकुचि, रंचक ह्वै, भई सहज मति भोरी ॥
मोहिं भयौ माखन पछितावौ, रीती देखि कमोरी ।
जब गहि बाहँ कुलाहल कीनी, तब गहि चरन निहोरी ॥
लागे लैन नैन जल भरि-भरि, तब मैं कानि न तोरी ।
'सूरदास' प्रभु देत दिनहिं दिन ऐसियै लरिक-सलोरी ॥१६२॥

राग सारंग

जसुदा कहँ लौं कीजै कानि।
दिन-प्रति कैसैं सही परति है, दूध-दही की हानि॥
अपने या बालक की करनी, जो तुम देखौ आनि।
गोरस खाइ, खवावै लरिकनि, भाजत भाजन भानि॥
मैं अपने मंदिर के कोनैं, राख्यौ माखन छानि।
सोई जाइ तिहारे ढोटा, लीन्हौ है पहिचानि॥
बूझि ग्वालि निज गृह मैं आयौ, नैंकु न संका मानि।
'सूर' स्याम यह उतर बनायौ, चींटी काढ़त पानि॥१६३॥

राग गौरी

साँवरेहिं बरजति क्यौं जु नहीं।
कहा करौं दिन प्रति की बातैं, नाहिंन परति सही॥
माखन खात, दूध लै डारत, लेपत देह दही।
ता पाछैं घर हू के लरिकनि, भाजत छिरकि मही॥
जो कछु धरहिं दुराइ, दूरि लै, जानत ताहि तहीं।
सुनहु महरि, तेरे या सुत सौं, हम पचि हार रहीं॥
चोरी अधिक चतुरई सीखी जाइ न कथा कही।
ता पर 'सूर' बछुरुवनि ढीलत, बन-बन फिरतिं बही॥१६४॥

राग बिलावल

ग्वालिनि उरहन के मिस आई।
नंद-नँदन तन-मन हरि लीन्हौ, बिनु देखैं छिन रह्यौ न जाई॥
सुनहु महरि अपने सुत के गुन, कहा कहौं किहि भाँति बनाई।
चोली फारि, हार गहि तोर्‍यौ, इन बातनि कहौ कौन बड़ाई॥
माखन खाइ, खवायौ ग्वालनि, जो उबर्‍यौ सो दियौ लुढ़ाई।
सुनहु 'सूर' चोरी सहि लीन्ही, अब कैसैं सहि जाति ढिठाई॥१६५॥

राग गौरी

महरि! तुम मानो मेरी बात।
ढूँढ़ि-ढाँढ़ि गोरस सब घर कौ, हर्‍यौ तुम्हारैं तात
कैसैं कहति लियौ छींके तैं, ग्वाल-कंध दै लात।
घर नहिं पियत दूध धौरी कौ, कैसैं तेरैं खात?
असंभाव बोलन आई है, ढीठ ग्वालिनी प्रात॥
ऐसौ नाहिं अचगरौ मेरौ, कहा बनावति बात।
का मैं कहौं, कहत सकुचति हौं, कहा दिखाऊँ गात॥
ह्वै गुन बड़े 'सूर' के प्रभु के, ह्याँ लरिका ह्वै जात॥१६६॥

राग रामकली

अपनो गाउँ लेउ नँदरानी ।
बड़े बाप की बेटी, पूतहिं भली पढ़ावति बानी ॥
सखा-भीर लै पैठत घर मैं आपु खाइ तौ सहिऐ ।
मैं जब चली सामुहैं पकरन, तब के गुन कहा कहिऐ ॥
भाजि गए दुरि देखत कतहूँ, मैं घर पौढ़ी आइ ।
हरैं-हरैं बेनी गहि पाछै, बाँधी पाटी लाइ ॥
सुनु मैया ! याके गुन मोसों, इन मोहिं लयौ बुलाई ।
दधि मैं पड़ी सेंत की मोपै चींटी सबै कढ़ाई ॥
टहल करत मैं याके घर की यह पति सँग मिलि सोई ।
'सूर' वचन सुनि हँसी जसोदा, ग्वालि रही मुख गोई ॥१६७॥

कृष्ण की सफाई— राग सारंग

झूठेहिं मोहिं लगावति ग्वारि ।
खेलत तें मोहिं बोलि लियौ इहिं, दोउ भुज भरि दीन्ही अँकवारि ॥
मेरे कर अपने उर धारति, आपुन ही चोली धरि फारि ।
माखन आपुहिं मोहिं खवायौ, मैं धौं कब दीन्हौ है डारि ॥
कह जानै मेरौ बारो भोरो, झुकी महरि दै-दै मुख गारि ।
'सूर' स्याम ग्वालिनि मन मोह्यो, चितै रही इकटकहिं निहारि ॥१६८॥

राग कान्हरौ

मोहिं कहति जुवती सब चोर ।
खेलत कहूँ रहौं मैं बाहिर, चितै रहति सब मेरी ओर ॥
बोलि लेति भीतर घर अपनैं, मुख चूमति, भरि लेति अँकोर ।
माखन हेरि देति अपने कर, कछु कहि विधि सौं करति निहोर ॥
जहाँ मोहिं देखति, तहँ टेरति, मैं नहिं जात दुहाई तोर ।
'सूर' स्याम हँसि कंठ लगायो, वे तरुनी कहँ बालक मोर ॥१६९॥

यशोदा का गोपियों को उत्तर—

राग कान्हरौ

अब ये झूठहु बोलत लोग ।
पाँच बरष अरु कछुक दिननि कौ, कब भयौ चोरी जोग ॥
इहिं मिस देखन आवति ग्वालिनि, मुँह फाटे जु गँवारि ।
अनदोषे को दोष लगावति, दई देइगौ टारि ॥

कैसैं करि याकी भुज पहुँची, कौन बेग ह्याँ आयौ ?
ऊखल ऊपर आनि, पीठि दै, तापर सखा चढ़ायौ ॥
जो न पत्याहु चलो सँग जसुमति ! देखो नैन निहारि ।
'सूरदास' प्रभु नैंकु न बरजौ, मन मैं महरि बिचारि ॥१७०॥

राग देवगंधार

मेरौ गोपाल तनक सौ, कहा करि जानै दधि की चोरी ।
हाथ नचावत आवति ग्वारिनि, जीभ करै किन थोरी ॥
कब सीके चढ़ि माखन खायौ, कब दधि-मटुकी फोरी ।
अँगुरी करि कबहूँ नहिं चाखत, घरहीं भरी कमोरी ॥
इतनी सुनत घोष की नारी, रहसि चली मुख मोरी ।
'सूरदास' जसुदा को नंदन, जो कछु करै सो थोरी ॥१७१॥

राग सारंग

कहै जनि ग्वारिनि झूठी बात ।
कबहूँ नहिं मनमोहन मेरौ, धेनु चरावन जात ॥
बोलत है बतियाँ तुतरौहीं, चलि चरननि न सकात ।
कैसैं करै माखन की चोरी, कत चोरी दधि खात ॥
देहीं लाइ तिलक केसरि कौ, जोबन-मद इतराति ।
'सूरज' दोष देति गोविंद कौं, गुरु लोगनि न लजाति ॥१७२॥

राग गौंड मलार

स्याम तन देखि री आपु तन देखिए ।
भींति जो होइ तौ चित्र अवरेखिए !
कहाँ मेरे कुँवर पाँचही बरष के, रोइ अजहूँ सु पै-पान माँगैं ।
तू कहाँ ढीठ, जोबन-प्रमत सुंदरी, फिरति इठलाति गोपाल आगैं ॥
कहाँ मेरे कान्ह की तनक सी आँगुरी, बड़े बड़े नखनि के चिह्न तेरैं ।
गहे कत, हँसैंगे लोग, अँकवारि भरि भुजा पाई कहाँ स्याम मेरैं ॥
नैननि झुकी सुमन मैं हँसी नागरी, उरहनौ देत रुचि अधिक बाढ़ी ।
सुनि सखी 'सूर' सरबस हरयौ साँवरैं, अनउतर महरि के द्वार ठाढ़ी ॥१७३॥

राग बिलावल

(कान्ह कौं) ग्वालिनि दोष लगावति जोर ।
इतनक दधि माखन के कारन कबहिं गयौ तेरी ओर ॥
तू तौ धन-जोबन की माती, नित उठि आवति भोर ।
लाल कुँअर मेरौ कछू न जानै, तू है तरुनि किसोर ॥
कापर नैन चढ़ाए डोलति, ब्रज मैं तिनुका तोर ।
'सूरदास' जसुदा अनखानी, यह जीवन-धन मोर ॥१७४॥

राग नट

मेरौ माई कौन कौ दधि चोरै ।
मेरैं बहुत दई कौ दीन्हौ लोग पियत हैं औरै ॥
कहा भयौ तेरे भवन गए जो पियौ तनक लै भोरै ।
ता ऊपर काहैं गरजति है, मनु आई चढ़ि घोरै ॥
माखन खाइ, मह्यौ सब डारै, बहुरौ भाजन फोरै ।
'सूरदास' यह रसिक ग्वालिनी, नेह नवल सँग जोरै ॥१७५॥

यशोदा का कृष्ण के प्रति—

राग नटनारायन

मेरे लाड़िले ! हो तुम जाउ न कहूँ ।
तेरेही काजैं गोपाल,सुनहु लाड़िले लाल, राखे हैं भाजन भरि सुरस छहूँ ॥
काहे कों पराएँ जाइ, करत इते उपाइ, दूध-दही-घृत अरु माखन तहूँ ।
करति कछू न कानि,बकति हैं कटु वानि, निपट निलज बैन बिलखि सहूँ ॥
ब्रज की ढिठी गुवारि, हाट की बेचनहारि, सकुचैं न देत गारि झगरत हूँ ।
कहाँ लगि सहौं रिस,बकत भई हौं कृस,इहिं मिस 'सूर' स्याम बदन चहूँ।१७६।

राग कान्हरौ

इन अँखियनि आगैं तें मोहन, एकौ पल जनि होहु नियारे ।
हौं बलि गई, दरस देखैं बिनु, तलफत हैं नैननि के तारे ॥
औरौ सखा बुलाइ आपने, इहिं आँगन खेलो मेरे बारे ।
निरखति रहौं फनिग की मनि ज्यौं, सुंदर बाल-विनोद तिहारे ॥
मधु, मेवा, पकवान, मिठाई, व्यंजन खाटे, मीठे, खारे ।
'सूर' स्याम जोइ-जोइ तुम चाहो,सोइ-सोइ माँगि लेहु मेरे बारे ॥१७७॥

राग गौरी

कत हो कान्ह ! काहु कें जात ।
ये सब ढीठ गरब गोरस के, मुख सँभारि बोलत नहिं बात ॥
जोइ-जोइ रुचै सोइ तुम मोपै, माँगि लेहु किन तात ।
ज्यौं-ज्यौं वचन सुनौं मुख अमृत, त्यौं-त्यौं सुख पावत सब गात ॥
कैसी टेव परी इन गोपिनि, उरहन के मिस आवति प्रात ।
'सूर' सु कत हठि दोष लगावति घरही कौ माखन नहिं खात ॥१७८॥

राग कान्हरौ

करत कान्ह ब्रज-घरनि अचगरी ।
खीझति महरि कान्ह सों पुनि-पुनि, उरहन लै आवति हैं सगरी ॥
बड़े बाप के पूत कहावत, हम-वे बास बसत इक बगरी ।
नंदहु तें ये बड़े कहे हैं फेरि बसैहैं यह ब्रज नगरी ॥
जननी के खीझत हरि रोए, झूठहिं मोहिं लगावति धगरी ।
'सूर' स्याम मुख पोंछि जसोदा, कहति सबै जुवती हैं लँगरी ॥१७९॥

राग बिलावल

हौं वारी रे मेरे तात !
काहे कों लाल पराए घर कौ, चोरि-चोरि दधि-माखन खात ?
गहि-गहि पानि मटुकिया रीती, उरहन के मिस आवत-जात ।
करि मनुहार, कोसिबे के डर, भरि-भरि देति जसोदा मात ॥
फूटी चुरी गोद भरि ल्यावैं, फाटे चीर दिखावैं गात ।
'सूरदास' स्वामी की जननी, उर लगाइ हँसि पूछति बात ॥१८०॥

राग रामकली

माखन खात पराए घर कौ ।
नित प्रति सहस मथानी मथिए, मेघ-सब्द दधि-माट घमरकौ ॥
कितने अहिर जियत मेरे घर, दधि मथि लै बेंचत महि मरकौ ।
नव लख धेनु दुहत हैं नित प्रति, बड़ौ नाम है नंद महर कौ ॥
ताके पूत कहावत हौ तुम, चोरी करत उघारत फरकौ ।
'सूर' स्याम कितनौ तुम खैहौ, दधि-माखन मेरैं जहँ-तहँ ढरकौ॥१८१॥

राग नट

अनत सुत ! गोरस कौं कत जात ?
घर सुरभी कारी धौरी कौ माखन माँगि न खात ॥
दिन प्रति सबै उरहनैं कैं मिस, आवति हैं उठि प्रात ।
अनलहते अपराध लगावति बिकट बनावति बात ॥
निपट निसंक बिबादिनि सनमुख, सुनि-सुनि नंद रिसात ।
मोसों कहति कृपन मेरैं घर ढोटाहु न अघात ॥
करि मनुहारि उठाइ गोद लै, बरजति सुत कौं मात ।
'सूर' स्याम नित सुनत उरहनौ, दुख पावत तेरौ तात ॥१८२॥

कृष्ण का यशोदा के प्रति—

राग रामकली

मैया ! मैं नहिं माखन खायौ ।
ख्याल परैं ये सखा सबै मिलि, मेरे मुख लपटायौ ॥
देखि तुही सींके पर भाजन, ऊँचैं धरि लटकायौ ।
हौं जु कहत नान्हे कर अपने मैं कैसैं करि पायौ ॥
मुख दधि पोंछि, बुद्धि इक कीन्ही, दौना पीठि दुरायौ ।
डारि साँटि, मुसुकाइ जसोदा, स्यामहिं कंठ लगाय
बाल-विनोद-मोद मन मोह्यौ, भक्ति-प्रताप दिखायौ ।
'सूरदास' जसुमति कौ यह सुख, सिव-विरंचि नहिं पायौ ॥१८३॥

राग बिलावल

तेरी सौं सुनु सुनु मेरी मैया !
आवत उबटि पर्‌यौ ता ऊपर, मारन कौं दौरी इक गैया ॥
ब्यानी गाइ बछरुवा चाटति,हौं पय पियत,पतूखिनि लैया ।
यहै देखि मोकौं बिजुकानी, भाजि चल्यौ कहि दैया दैया ॥
दोउ सींग बिच ह्वै हौं आयौ, जहाँ न कोऊ हौ रखवैया ।
तेरौ पुन्य सहाय भयौ है, उबर्‌यौ बाबा नंद-दुहैया ॥
याके चरित कहा कोउ जानै, बूझौ धौं संकर्षन भैया ।
'सूरदास' स्वामी की जननी, उर लगाइ हँस लेति बलैया ॥१८४॥

पुनः माखन चोरी और गोपियों का उराहना—

राग धनाश्री

माखन माँगि लियौ जसुमति सौं ।
माता सुनत तुरत लै आई, लगी खवावन रति सौं ॥
मैया मैं अपने कर खैहौं, धरि दै मेरे हाथ ।
माखन खात चले उठि खेलन, सखा जुरे सब साथ ॥
मथुरा जात ग्वालिनी देखी, चरचि लई हरि आइ।
'सूर' स्याम ता घर के पाछैं, बैठि रहे अरगाइ ॥१८५॥

राग धनाश्री

मथुरा जाति हौं बेचन दहियौ ।
मेरे घर कौ द्वार सखी री, तबलौं देखत रहियौ ॥
दधि-माखन द्वै माट अछूते, तोहिं सौंपति हौं सहियौ ।
और नहीं या ब्रज मैं कोऊ, नंद-सुवन सखि लहियौ ॥
ये सब बचन सुने मन-मोहन, वहै राह मन गहियौ ।
'सूर' पौरि लौं गई न ग्वालिनि, कूदि परे द्वै धहियौ ॥१८६॥

राग गौरी

गए स्याम ग्वालिनि घर सूनैं ।
माखन खाइ, डारि सब गोरस, बासन फोरि किए सब चूनै ॥
बड़ौ माट इक बहुत दिननि कौ, ताहि करयौ दस टूक ।
सोवत लरिकिन छिरकि मही सौं, हँसत चले दै कूक ॥
आइ गई ग्वालिनि तिहिं औसर, निकसत हरि धरि पाए ।
देखे घर बासन सब फूटे, दूध दही ढरकाए ॥
दोउ भुज धरि गाढ़ैं करि लीन्हे, गई महरि के आगैं ।
'सूरदास' अब बसै कौन ह्याँ, पति रहिहै ब्रज त्यागैं ॥१८७॥

राग बिलावल

ऐसौ हाल मेरे घर कीन्हौ, हौं ल्याई तुम पास पकरिकै ।
फोरि भाँड़ दधि माखन खायौ,उबरयौ सो डार्यौ रिस करिकै ॥
लरिका छिरकि मही सौं देखै, उपज्यौ पूत सपूत महरि कै ।
बड़ौ माट घर धरयौ जुगनि कौ,टूक-टूक कियो सखिन पकरिकै ॥
पारि सपाट चले तब पाए, हौं ल्याई तुमहीं पै धरि कै ।
'सूरदास' प्रभु कौं यौं राखौ, ज्यौं राखिए गज मत्त जकरि कै ॥१८८॥

राग मलार

महरि ! तैं बड़ी कृपन है माई ।
दूध - दही बहु विधि कौ दीनौ, सुत सौं धरति छपाई ॥
बालक बहुत नहीं री तेरैं, एकै कुँवर कन्हाई ।
सोऊ तौ घर ही घर डोलतु, माखन खात चोराई ॥
वृद्ध बयस, पूरे पुन्यनि तैं, तैं बहुतै निधि पाई ।
ताहू के खैबे - पीबे कौं, कहा करति चतुराई ॥
सुनहु न बचन चतुर नागरि के, जसुमति नंद सुनाई ।
'सूर' स्याम कौं चोरी कैं मिस, देखन है यह आई ॥१८९॥

राग बिलावल

आजि गयौ मेरैं भाजन फोरि ।
[illegible] लीन्हे, नाचत फिरत साँकरी खोरि ॥
मारग मैं कोउ चलन न पावत, धावत गोरस लेत अँजोरि ।
[illegible] सौं खेलत, नारी देत, हँसत मुख मोरि ॥
[illegible] ढोटा की, सब ब्रज बाँध्यौ प्रेम की डोरि ।
[illegible] माखन सिर पर, जो भावत सो लेत है छोरि ॥
[illegible] आगनि देत, सिकहरैं तोरि ।
'सूर' [illegible] चोरी-ढँढ़-डोरि ॥१९०॥

राग बिलावल

तेरे लाल मेरौ माखन खायौ ।
दुपहर दिवस जानि घर सूनौ, ढूँढ़ि-ढँढ़ोरि आपही आयौ ॥
खोलि किंवार, पैठि मंदिर में, दूध-दही सब सखनि खवायौ ।
ऊखल चढ़ि, सींके कौं लीन्हौ, अनभावत भुइँ में ढरकायौ ॥
दिन प्रति हानि होति गोरस की, यह ढोटा कौनैं ढँग लायौ ।
'सूर' स्याम कौं हटकि न राखै, तैं ही पूत अनोखौ जायौ ॥१६१॥

राग नट

नंद-घरनि ! सुत भलौ पढ़ायौ ।
ब्रज-बीथिनि, पुर-गलिनि, घरै-घर, घाट-बाट सब सोर मचायौ ॥
लरिकनि मारि भजत काहू के, काहू कौ दधि-दूध लुटायौ ।
काहू के घर करत भँड़ाई, मैं ज्यों-त्यों करि पकरन पायौ ॥
अब तौ इन्हैं जकरि धरि बाँधौ, इहिं सब तुम्हरौ गाउँ भजायौ ।
'सूर' स्याम भुज गही नँदरानी, बहुरि कान्ह अपने ढँग लायौ ॥१६२॥

यशोदा का गोपियों के प्रति—

राग गौरी

सुनु री ग्वारि ! कहौं इक बात ।
मेरी सौं तुम याहि मारियौ, जबहीं पावौ घात ॥
अब मैं याहि जकरि बाँधौंगी, बहुतै मोहिं खिझायौ ।
साँटिनि मारि करौं पहुनाई, चितवत कान्ह डरायौ ॥
अजहूँ मानि, कह्यौ करि मेरौ, घर-घर तू जनि जाहि ।
'सूर' स्याम कह्यौ, कहूँ न जैहौं, माता मुख-तन चाहि ॥१६३॥

यशोदा का रोष और ऊखल-बंधन—

राग सारंग

कन्हैया ! तू नहिं मोहिं डरात ।
षटरस धरे छाँड़ि, कत पर-घर चोरी करि-करि खात ॥
बकत-बकत तोसौं पचिहारी, नैंकुहु लाज न आई ।
ब्रज-परगन-सिकदार महर, तू ताकी करत नन्हाई ॥
पूत सपूत भयौ कुल मेरैं, अब मैं जानी बात ।
'सूर' स्याम अब लौं तुहिं बकस्यौ, तेरी जानी घात ॥१६४॥

राग गौरी

ऐसी रिस में, जो धरि पाऊँ।
कैसे हाल करौं धरि हरि के, तुमकौं प्रगट दिखाऊँ॥
साँटिया लिए हाथ नँदरानी, थरथरात रिस गात।
मारे बिना आजु जो छाँड़ौं, लागै मेरैं तात॥
इहिं अंतर ग्वारिनि इक औरै, धरे बाँह हरि ल्यावति।
भली महरि सूधौ सुत जायौ, चोली-हार बतावति॥
रिस में रिस अतिहीं उपजाई, जानि जननि अभिलाप।
'सूर' स्याम भुज गहे जसोदा, अब बाँधौं कहि माप॥१६५॥

राग सोरठ

जसुमति रिस करि-करि रजु करपै।
सुत हित क्रोध देखि माता कें, मनहीं मन हरि हरपै॥
उफनत छीर जननि करि ब्याकुल, इहिं विधि भुजा छुड़ायौ।
भाजन फोरि दही सब डार्‌यौ, माखन-कीच मचायौ॥
लै आई जेंवरि अब बाँधौं, गरब जानि न बँधायौ।
अंगुर द्वै घटि होति सबनि सौं, पुनि-पुनि और मँगायौ॥
नारद-साप भए जमलार्जुन, तिनकौं अब जु उधारौं।
'सूरदास' प्रभु कहत, भक्त-हित जनम-जनम तनु धारौं॥१६६॥

राग सारंग

बाँधौं आजु, कौन तोहिं छोरै।
बहुत लँगरई कीन्ही मोसौं, भुज गहि रजु ऊखल सौं जोरै॥
जननी अति रिस जानि बँधायौ, निरखि बदन, लोचन जल ढोरै।
यह सुनि ब्रज-जुवतीं सब धाईं, कहति कान्ह अब क्यों नहिं छोरै॥
ऊखल सौं गहि बाँधि जसोदा, मारन कौं साँटी कर तोरै॥
साँटी देखि ग्वालि पछितानी, बिकल भई जहँ-तहँ मुख मोरै।
सुनहु महरि, ऐसी न बूझिऐ, सुत बाँधति माखन-दधि थोरैं।
'सूर' स्याम कौं बहुत सतायौ, चूक परी हम तैं यह भोरैं॥१

गोपियों का यशोदा से—

राग सोरठ

जसुदा, तेरौ मुख [illegible]।
कमलनैन हरि हिचिकिनि रो[illegible] [illegible]।
जो तेरौ सुत खरौ अचगरौ,
कहा भयौ जो घर के ढोटा,

कोरी मटुकी दह्यौ जमायौ, जाख न पूजन पायौ ।
तिहिं घर देव-पितर, काहे कौं, जा घर कान्हर आयौ ॥
जाकौ नाम लेत भ्रम छूटै, कर्म - फंद सब काटै ।
सोई इहाँ जेंवरी बाँधे, जननि साँटि लै डाँटै ।
दुखित जानि दोउ सुत कुबेर के, ऊखल आपु बँधायौ ॥
'सूरदास' प्रभु भक्त - हेत ही, देह धारि कै आयौ ॥१६८॥

राग सारंग

(माई) नैंकुहूँ न दरद करति, हिलकिनि हरि रोवै ।
बज्रहु तें कठिन हियौ, तेरौ है जसोवै !
पलना पौढ़ाइ जिन्हैं बिकट बाउ काटै ।
उलटे भुज बाँधि तिन्हैं लकुट लिए डाँटै ॥
नैंकुहूँ न थकत पानि, निरदई अहीरी !
अहो नंदरानि ! सीख कौन पै लही री ॥
जाकौं सिव - सनकादिक, सदा रहत लोभा ।
'सूरदास' प्रभु कौ मुख निरखि देखि सोभा ॥१६९॥

राग बिहागरौ

कुंवर जल लोचन भरि-भरि लेत ।
बालक बदन बिलोकि जसोदा, कत रिस करति अचेत ॥
छोरि उदर तें दुसह दाँवरी, डारि कठिन कर बेंत ।
कहि धौं री तोहिं क्यों करि आवै, सिसु पर तामस एत ॥
मुख आँसू अरु माखन-कनुका, निरखि नैन छबि देत ।
मानौ स्रवत सुधानिधि मोती, उडुगन अवलि समेत ॥
ना जानौं किहिं पुन्य प्रगट भए, इहिं ब्रज नंद - निकेत ।
तन-मन-धन न्यौछावरि कीजै, 'सूर' स्याम के हेत ॥२००॥

राग केदारौ

हरि के बदन तन धौं चाहि ।
तनक दधि कारन जसोदा ! इतौ कहा रिसाहि ॥
लकुट के डर डरत ऐसैं, सजल सोभित डोल ।
नील-नीरज-दल मनौ अलि-अंसकनि कृत लोल ॥
बात बस समृनाल जैसैं प्रात पंकज - कोस ।
नमित मुख इमि अधर सूचत, सकुच में कछु रोस ॥
कितिक गोरस हानि, जाकौं करति है अपमान ।
'सूर' ऐसे बदन ऊपर, वारिऐ तन - प्रान ॥२०१॥

राग केदारौ

हरि-मुख देखि हो नँद-नारि !
महरि ऐसे सुभग सुत सों, इतौ कोह निवारि ॥
सरद-मंजुल-जलज-लोचन लोल, चितवनि दीन ।
मनहुँ खेलत हैं परस्पर, मकरध्वज द्वै मीन ॥
ललित कन-संजुल कपोलनि लसत कज्जल-अंक ।
मनहुँ राजत रजनि, पूरन कलापति सकलंक ॥
बेगि बंधन छोरि, तन-मन वारि, लै हिय लाइ ।
नवल स्याम किसोर ऊपर, 'सूर' जन बलि जाइ ॥२०२॥

राग धनाश्री

कहा भयौ जो घर के लरिका, चोरी माखन खायौ ।
अहो जसोदा ! कत त्रासति हौ, यहै कोखि कौ जायौ ॥
बालक अजौं, अजान न जानै, केतिक दह्यौ लुठायौ ।
तेरौ कहा गयौ ? गोरस कौ गोकुल अंत न पायौ ॥
हा हा लकुट त्रास दिखरावति, आँगन पास बँधायौ ।
रुदन करत दोउ नैन रचे हैं, मनहुँ कमल-कन छायौ ॥
पौढ़ि रहे धरनी पर तिरछैं, बिलखि वदन मुरझायौ ।
'सूरदास' प्रभु रसिक-सिरोमनि, हँसि करि कंठ लगायौ ॥२०३॥

राग धनाश्री

चित दै चितै तनय-मुख ओर ।
सकुचत सीत-भीत जलरुह ज्यों, तुव कर लकुट निरखि सखि ! घोर ॥
आनन ललित स्रवत जल सोभित, अरुन चपल लोचन की कोर ।
कमल-नाल तें मृदुल ललित भुज, ऊखल बाँधे दाम कठोर ॥
लघु अपराध देखि बहु सोचति, निरदय हृदय वज्र सम तोर ।
'सूर' कहा सुत पर इतनी रिस, कहि इतनै कछु माखन-चोर ॥२०४॥

राग धनाश्री

चितै धौं कमल-नैन की ओर ।
कोटि चंद वारौं मुख-छवि पर, ए हैं साहु, कै चोर ॥
उज्ज्वल अरुन असित दीसति हैं, दुहुँ नैननि की कोर ।
मानौ सुधा पान के कारन, बैठे निकट चकोर ॥
कतहिं रिसाति जसोदा ! इनसौं, कौन ज्ञान है तोर ।
'सूर' स्याम बालक मनमोहन, नाहिंन तरुन किसोर ॥२०५॥

राग बिहागरौ

देखौ माई, कान्ह हिलकियनि रोवै ।
इतनक मुख माखन लपटान्यौ, डरनि आँसुवनि धोवै ॥
माखन लागि उलूखल बाँध्यौ, सकल लोग ब्रज जोवै ।
निरखि कुरुख उन बालनि की दिस, लाजनि अँखियनि गोवै ॥
ग्वाल कहैं धनि जननि हमारी, सुकर सुरभि नित नोवै ।
बरबस ही बैठारि गोद मैं, धारैं बदन निचोवै ॥
ग्वालि कहैं या गोरस कारन, कत सुत की पति खोवै ?
आनि देहिं अपने घर तें हम, चाहति जितौ, जसौवै !
जब-जब बंधन छोर्‌यौ चाहति, 'सूर' कहै यह को वै ।
मन माधौ-तन, चित गोरस मैं, इहिं बिधि महरि बिलोवै ॥२०६॥

राग बिलावल

जसुदा ! देखि सुत की ओर ।
बाल बैस रसाल पर, रिस इती कहा कठोर ॥
बार-बार निहारि तुव तन, नमित-मुख दधि-चोर ।
तरनि किरनहिं परसि मानौ, कुमुद सकुचत भोर ॥
त्रास तें अति चपल गोलक, सजल सोभित छोर ।
मीन मानौ बेधि बंसी, करत जल झकझोर ॥
देत छबि अति गिरत उर पर अंबु-कन के जोर ।
ललित हिय जनु मुक्त-माला, गिरति टूटैं डोर ॥
नंद-नंदन जगत-बंदन करत आँसू कोर ।
दास 'सूरज' मोहिं सुख-हित, निरखि नंदकिसोर ॥२०७॥

राग नटनारायनी

देखि री देख, हरि बिलखात ।
अजिर लोटत राखि जसुमति, धूरि-धूसर गात ॥
मूँदि मुख छिन सुसुकि रोवत, छिनक मौन रहात ।
कमल मधि अलि उड़त, सकुचत, पच्छ दल-आघात ॥
चपल दृग, पल भरे अँसुवा, कछुक ढरि-ढरि जात ।
अलप जल पर सीप द्वै लखि, मीन मनु अकुलात ॥
लकुट के डर ताकि तोहिं तब पीत पट लपटात ।
'सूर' प्रभु पर वारियै ज्यौं, भलेहिं माखन खात ॥२०८॥

राग सारंग

कब के बाँधे ऊखल दाम ।
कमल-नैन बाहिर करि राखे, तू बैठी सुखधाम ।।
है निरदई, दया कछु नाहीं, लागि रही गृह-काम ।
देखि छुधा तें मुख कुम्हिलानौ, अति कोमल तन स्याम ।।
छोरहु बेगि भई बड़ी बिरियाँ, बीति गए जुग जाम ।
तेरे त्रास निकट नहिं आवत, बोलि सकत नहिं राम ।।
जन-कारन भुज आपु बँधाए, बचन कियौ रिषि ताम ।
ताही दिन तें प्रगट 'सूर', प्रभु यह दामोदर नाम ।।२०६।।

राग सोरठ

(जसोदा) तेरौ भलौ हियौ है माई ।
कमल-नैन माखन के कारन, बाँधे ऊखल ल्याई ।।
जो संपदा देव-मुनि-दुर्लभ, सपनेहु देइ न दिखाई ।
याही तें तू गर्ब-भुलानी, घर बैठैं निधि पाई ।।
जो मूरति जल-थल में व्यापक, निगम न खोजत पाई ।
सो मूरति तैं अपनैं आँगन, चुटकी दै जु नचाई ।।
तब काहू सुत रोवत देखति, दौरि लेति हिय लाई ।
अब अपने घर के लरिका सौं इती करति निठुराई !
बारंबार सजल लोचन करि, चितवत कुँवर कन्हाई ।
कहा करौं, बलि जाउँ, छोरि तू, तेरी सौंह दिवाई ।।
सुर-पालक, असुरनि-उर-सालक, त्रिभुवन जाहि डराई ।
'सूरदास' प्रभु की यह लीला, निगम नेति नित गाई ।।२१०।।

राग केदारौ

देखि री नंद-नंदन-ओर ।
त्रास तें तन त्रसित भए हरि, तकत आनन तोर ।।
बार-बार डरात तोकौं, बरन बदनहिं थोर ।
मुकुर-मुख, दोउ नैन ढारत, छनहिं छन छवि-छोर ।।
सजल चपल कनीनिका पल अरुन ऐसैं डोर (ल) ।
रस भरे अंबुजनि भीतर, भ्रमत मानौ भौंर ।।
लकुट के डर देखि जैसे, भए स्रोनित ओर ।
लाइ उरहिं, बहाइ रिस जिय, तजहु प्रकृति कठोर ।।
कछुक करुना करि जसोदा, करति निपट निहोर ।
'सूर' स्याम त्रिलोक की निधि, भलैंहि माखन-चोर ।।२११।।

राग रामकली

जसुदा ! यह न बूझि कौ काम ।
कमल नैन की भुजा देखि धौं, तैं बाँधे हैं दाम ॥
पुत्रहु तें प्यारौ कोउ है री, कुल-दीपक मनि-धाम ।
हरि पर वारि डारि सब तन, मन, धन, गोरस अरु ग्राम ॥
देखियत कमल बदन कुम्हिलानौ, तू निरमोही बाम ।
बैठी है मंदिर सुख छहियाँ, सुत दुख पावत घाम ॥
येई हैं सब ब्रज के जीवन, सुख पावति लिएँ नाम ।
'सूरदास' प्रभु भक्तनि के बस, यह ठानी घनस्याम ॥२१२॥

राग बिहागरौ

कहौ तौ माखन ल्यावैं घर तें ।
जा कारन तू छोरति नाहीं, लकुट न डारति कर तें ॥
सुनहु महरि ! ऐसी न बूझियै, सकुचि गयौ मुख डर तें ।
ज्यों जल-रुह ससि-रस्मि पाइ कै, फूलत नाहिन सर तें ॥
ऊखल लाइ भुजा धरि बाँधी, मोहनि मूरति बर तैं ।
'सूर' स्याम-लोचन जल बरषत, जनु मुकुता हिमकर तें ॥२१३॥

राग धनाश्री

ऐसी रिस तोकौं नँदरानी !
भली बुद्धि तेरे जिय उपजी, बड़ी बैस अब भई सयानी ॥
ढोटा एक भयौ कैसैंहु करि, कौन-कौन करवर विधि भानी ।
क्रम-क्रम करि अब लौं उबर्‌यौ है, ताकौं मारि पितर दै पानी !
को निरदई ! रहै तेरे घर, को तेरे सँग बैठै आनी ।
सुनहु 'सूर' कहि-कहि पचिहारीं, जुवती चलीं घरनि बिरुझानी ॥२१४॥

यशोदा का गोपियों को उत्तर—

राग कल्यान

कहन लगीं अब बढ़ि-बढ़ि बात ।
ढोटा मेरौ तुमहिं बँधायौ, तनकहिं माखन खात ॥
अब मोहिं माखन देति मँगाए, मेरैं घर कछु नाहिं !
उरहन कहि-कहि साँझ सवारैं, तुमहि बँधायौ याहि ॥
रिसही में मोकौं गहि दीन्हौ, अब लागीं पछितान ।
'सूरदास' अब कहति जसोदा, बूझ्यौ सबकौ ज्ञान ॥२१५॥

राग आसावरी

जाहु चली अपने-अपने घर ।
तुम हीं सबनि मिलि ढीठ करायौ, अब आई छोरन वर ॥
मोहिं अपने बाबा की सौहैं, कान्हहिं अब न पत्याउँ ।
भवन जाहु अपने-अपने सब, लागति हौं मैं पाउँ ॥
मोकों जनि बरजौ जुवती कोउ, देखौ हरि के ख्याल ।
'सूर' स्याम सों कहति जसोदा, बड़े नंद के लाल ॥२१६॥

गोपियों का हलधर से—

राग सारंग

हलधर सों कहि ग्वालि सुनायौ ।
प्रातहिं तें तुम्हरौ लघु भैया, जसुमति ऊखल बाँधि लगायौ ॥
काहू के लरिकहिं हरि मार्‌यौ, भोरहिं आनि तिनहिं गुहरायौ ।
तबहीं तें बाँधे हरि बैठे, सो हम तुमकों आनि जनायौ ॥
हम बरजी,बरज्यौ नहिं मानति, सुनतहिं बल आतुर ह्वै धायौ ।
'सूर' स्याम बैठे ऊखल लगि, माता उर तनु अतिहिं त्रसायौ ॥२१७॥

हलधर और यशोदा का वार्तालाप—

राग सारंग

यह सुनि कै हलधर तहँ धाए ।
देखि स्याम ऊखल सों बाँधे, तबहीं दोउ लोचन भरि आए ॥
मैं बरज्यौ कै बार कन्हैया ! भली करी दोउ हाथ बँधाए ।
अजहूँ छाँड़ौगे लँगराई, दोउ कर जोरि जननि पै आए ॥
स्यामहिं छोरि मोहिं बाँधै बरु, निकसत सगुन भले नहिं पाए ।
मेरे प्रान-जिवन-धन कान्हा, तिनके भुज मोहिं बँधे दिखाए ॥
माता सों कह करौं ढिठाई, सो सरूप कहि नाम सुनाए ।
'सूरदास' तब कहति जसोदा, दोउ भैया तुम इक मत पाए ॥२१८॥

राग सोरठ

काहे कों हरि इतनौ त्रास्यौ ।
सुनि री मैया ! मेरे भैया कितनौ गोरस नास्यौ ॥
जब रजु सों कर गाढ़े बाँधे, छर - छर मारी साँटी ।
सूने घर, बाबा नँद नाहीं, ऐसैं करि हरि डाँटी ॥
और नैंकु छ्वै देखै स्यामहिं, ताकौं करौं निपात ।
तू जो करै बात, सोइ साँची, कहा कहौं तोहिं मात ॥

ठाढ़े बदत बात सब हलधर, माखन प्यारौ तोहि ।
ब्रज-प्यारो, जाकौं मोहिं गारौ, छोरत काहे न ओहि ॥
काकौ ब्रज, माखन-दधि काकौ, बाँधे जकरि कन्हाई ।
सुनत 'सूर' हलधर की बानी, जननी सैन बताई ॥२१६॥

राग सारंग

सुनहु बात मेरी बलराम !
करन देहु इनकी मोहिं पूजा, चोरी प्रगटत नाम ॥
तुमहीं कहौ, कमी काहे की, नव-निधि मेरे धाम ।
मैं बरजति, सुत जाहु कहूँ जनि, कहि हारी दिन-जाम ॥
तुमहुँ मोहिं अपराध लगायौ, माखन प्यारौ स्याम ।
सुनि मैया तोहि छाँड़ि कहौं किहिं को राखै तेरैं ताम ॥
तेरी सौं, उरहन लै आवति, झूठहिं ब्रज की बाम ।
'सूर' स्याम अतिहीं अकुलाने, कब के बाँधे दाम ॥२२०॥

राग रामकली

जसोदा ऊखल बाँधे स्याम ।
मनमोहन बाहिर ही छाँड़े, आपु गई गृह - काम ॥
दह्यौ मथति, मुख तें कछु बकरति, गारी दै लै नाम ।
घर - घर डोलत माखन चोरत, षट - रस मेरे धाम ॥
ब्रज के लरिकनि मारि भजत है, जाहु तुमहु बलराम !
'सूर' स्याम ऊखल सों बाँधे, निरखहिं ब्रज की बाम ॥२२१॥

यमलार्जुन-उद्धार और यशोदा का पश्चात्ताप—

राग धनाश्री

तबहिं स्याम इक बुद्धि उपाई ।
जुवती गईं घरनि सब अपने, गृह - कारज जननी अटकाई ॥
आपु गए जमलार्जुन-तरु-तर, परसत पात उठे झहराई ।
देए गिराइ धरनि दोऊ तरु, सुत कुबेर के प्रगटे आई ॥
दोउ कर जोरि करत दोऊ अस्तुति, चारि भुजा तिन्ह प्रगट दिखाई ।
'सूर' धन्य ब्रज जनम लियौ हरि, धरनी की आपदा नसाई ॥२२२॥

राग रामकली

तरु दोउ धरनि गिरे भहराइ ।
जर सहित अरराइ कै, आघात - सब्द सुनाइ ॥
भए चक्रित लोग ब्रज के, सकुचि रहे डराइ ।
कोउ रहे आकास देखत, कोउ रहे सिर नाइ ॥

थकि लौं जकि रहे जहँ - तहँ, देह-गति बिसराइ ।
निरखि जसुमति अजिर देखै, बँधे नाहिं कन्हाइ ॥
बृच्छ दोउ धर परे देखे, महरि कीन्ह पुकार ।
अबहिं आँगन छाँड़ि आई, चप्यौ तरु की डार ॥
मैं अभागिनि, बाँधि राखे, नंद - प्रान - अधार ।
सोर सुनि नँद - द्वार आए, बिकल गोपी-ग्वार ॥
देखि तरु सब अति डराने, हैं बड़े बिस्तार ।
गिरे कैसैं, बड़ौ अचरज, नैंकु नहीं बयार ॥
दुहुँ तरु बिच स्याम बैठे, रहे ऊखल लागि ।
भुजा छोरि उठाइ लीन्हे, महर हैं बड़भागि ॥
निरखि जुवती अंग हरि के, चोट जनि कहुँ लागि ।
कबहुँ बाँधति कबहुँ मारति, महरि बड़ी अभागि ॥
नैन जल भरि ढारि जसुमति, सुतहिं कंठ लगाइ ।
जरै रिस जिहिं तुमहिं बाँध्यौ, लगै मोहिं बलाइ ॥
नंद सुनि मोहिं कहा कहैंगे, देखि तरु दोउ आइ ।
मैं मरौं, तुम कुसल रहौ दोउ, स्याम-हलधर भाइ ॥
आइ घर जो नंद देखे, तरु गिरे दोउ भारि
बाँधि राखति सुतहिं मेरे, देत महरिहिं गारि ॥
'तात' कहि तब स्याम दौरे, महर लियौ अँकवारि ।
कैसैं उबरे बृच्छ-तर तें, 'सूर' है बलिहारि ॥२२३॥

राग नट

मोहन, हौं तुम ऊपर वारी ।
कंठ लगाइ लिए, मुख चूमति, सुंदर स्याम बिहारी ॥
काहे कों ऊखल सों बाँध्यौ, कैसी मैं महतारी ।
अतिहिं उतंग बयारि न लागत, क्यों टूटे तरु भारी ॥
बारंबार बिचारति जसुमति, यह लीला अवतारी ।
'सूरदास' स्वामी की महिमा, कापै जाति बिचारी ॥२२४॥

राग केदारौ

जसुमति कहति कान्ह मेरे प्यारे, अपने ही आँगन तुम खेलौ ।
बोलि लेहु सब सखा संग के, मेरौ कह्यौ कबहुँ जिनि पेलौ ॥
ब्रज-बनिता सब चोर कहति तोहिं, लाजनि सकुचि जात मुख मेरौ ।
आजु मोहिं बलराम कहत हे, झूठहिं नाम धरति हैं तेरौ ॥
जब मोहिं रिस लागति तब त्रासति, बाँधति, मारति, जैसैं चेरौ ।
'सूर' हँसति ग्वालिनि दै तारी, चोर नाम कैसैंहु सुत फेरौ ॥२२५॥

राग सारंग

अब घर काहू के जनि जाहु ।
तुम्हरैं आजु कमी काहे की, कत तुम अनतहिं खाहु ॥
बरै जेंवरी, जिहिं तुम बाँधे, परै हाथ भहराइ ।
नंद मोहिं अतिहीं त्रासत हैं, बाँधे कुँवर कन्हाइ ॥
रोग जाउ मेरे हलधर के, छोरत हो तब स्याम ।
'सूरदास' प्रभु खात फिरौ जनि, माखन-दधि तुव धाम ॥२२६॥

वृंदावन-प्रस्थान—

राग सारंग

महर-महरि के मन यह आई ।
गोकुल होत उपद्रव दिन प्रति, बसिऐ बृंदावन में जाई ॥
सब गोपनि मिलि सकटा साजे, सबहिनि के मन में यह भाई ।
'सूर' जमुन - तट डेरा दीन्हे, पाँच बरष के कुँवर कन्हाई ॥२२७॥

गो-दोहन

राग बिलावल

धेनु दुहत हरि देखत ग्वालनि ।
आपुन बैठि गए तिनके सँग, सिखवहु मोहिं कहत गोपालनि ॥
काल्हि तुम्हैं गो - दुहन सिखावैं, दुहीं सबै अब गाइ ।
भोर दुहौ जनि नंद - दुहाई, उनसौं कहत सुनाइ ॥
बड़ौ भयौ, अब दुहत रहौंगौ, अपनी धेनु निबेरि ।
'सूरदास' प्रभु कहत सौंह दै, मोहिं लीजौ तुम टेरि ॥२२८॥

राग कान्हरौ

मैं दुहिहौं, मोहिं दुहन सिखावहु ।
कैसैं गहत दोहनी घुटुवनि, कैसैं बछरा थन लै लावहु ॥
कैसैं लै नोई पग बाँधत, कैसैं लै गैया अटकावहु ।
कैसैं धार दूध की बाजति, सोइ-सोइ बिधि तुम मोहिं बतावहु ॥
निपट भई अब साँझ कन्हैया ! गैयनि पै कहुँ चोट लगावहु ।
'सूर' स्याम सों कहत ग्वाल सब, धेनु दुहन प्रातहिं उठि आवहु ॥२२९॥

राग बिलावल

तनक कनक की दोहनी, दै-दै री मैया ।
तात दुहन सीखन कह्यौ, मोहिं धौरी गैया ॥
अटपट आसन बैठि कै, गो-थन कर लीन्हौ ।
धार अनतही देखि कै, ब्रजपति हँसि दीन्हौ ॥

घरिक लौं जकि रहे जहँ - तहँ, देह-गति विसराइ ।
निरखि जसुमति अजिर देखै, बँधे नाहिं कन्हाइ ॥
बृच्छ दोउ धर परे देखे, महरि कीन्ह पुकार ।
अबहिं आँगन छाँड़ि आई, चप्यौ तरु की डार ॥
मैं अभागिनि, बाँधि राखे, नंद - प्रान - अधार ।
सोर सुनि नँद - द्वार आए, विकल गोपी-ग्वार ॥
देखि तरु सब अति डराने, हैं बड़े बिस्तार ।
गिरे कैसैं, बड़ौ अचरज, नैंकु नहीं बयार ॥
दुहुँ तरु बिच स्याम बैठे, रहे ऊखल लागि ।
भुजा छोरि उठाइ लीन्हे, महर हैं बड़भागि ॥
निरखि जुवती अंग हरि के, चोट जनि कहुँ लागि ।
कबहुँ बाँधति कबहुँ मारति, महरि बड़ी अभागि ॥
नैन जल भरि ढारि जसुमति, सुतहिं कंठ लगाइ ।
जरै रिस जिहिं तुमहिं बाँध्यौ, लगै मोहिं बलाइ ॥
नंद सुनि मोहिं कहा कहैंगे, देखि तरु दोउ आइ ।
मैं मरौं, तुम कुसल रहौ दोउ, स्याम-हलधर भाइ ॥
आइ घर जो नंद देखे, तरु गिरे दोउ भारि
बाँधि राखति सुतहिं मेरे, देत महरिहिं गारि ॥
'तात' कहि तब स्याम दौरे, महर लियौ अँकवारि ।
कैसैं उबरे बृच्छ-तर तें, 'सूर' है बलिहारि ॥२२३॥

राग नट

मोहन, हौं तुम ऊपर वारी ।
कंठ लगाइ लिए, मुख चूमति, सुंदर स्याम बिहारी ॥
काहे कौं ऊखल सौं बाँध्यौ, कैसी मैं महतारी ।
अतिहिं उतंग बयारि न लागत, क्यों टूटे तरु भारी ॥
बारंबार विचारति जसुमति, यह लीला अवतारी ।
'सूरदास' स्वामी की महिमा, कापै जाति बिचारी ॥२२४॥

राग केदारौ

जसुमति कहति कान्ह मेरे प्यारे, अपने ही आँगन तुम खेलौ ।
बोलि लेहु सब सखा संग के, मेरौ कह्यौ कबहुँ जिनि पेलौ ॥
ब्रज-बनिता सब चोर कहति तोहिं, लाजनि सकुचि जात मुख मेरौ ।
आजु मोहिं बलराम कहत हे, झूठहिं नाम धरति हैं तेरौ ॥
जब मोहिं रिस लागति तब त्रासति, बाँधति, मारति, जैसें चेरौ ।
'सूर' हँसति ग्वालिनि दै तारी, चोर नाम कैसैंहु सुत फेरौ ॥२२५॥

राग सारंग

अब घर काहू के जनि जाहु ।
तुम्हरैं आजु कमी काहे की, कत तुम अनतहिं खाहु ।।
बरै जेंवरी, जिहिं तुम बाँधे, परै हाथ भहराइ ।
नंद मोहिं अतिहीं त्रासत हैं, बाँधे कुँवर कन्हाइ ।।
रोग जाउ मेरे हलधर के, छोरत हो तब स्याम ।
'सूरदास' प्रभु खात फिरौ जनि, माखन-दधि तुव धाम ।।२२६।।

वृंदावन-प्रस्थान— राग सारंग

महर-महरि के मन यह आई ।
गोकुल होत उपद्रव दिन प्रति, बसिऐ वृंदावन में जाई ।।
सब गोपनि मिलि सकटा साजे, सबहिनि के मन में यह भाई ।
'सूर' जमुन - तट डेरा दीन्हे, पाँच बरष के कुँवर कन्हाई ।।२२७।।

गो-दोहन

राग बिलावल

धेनु दुहत हरि देखत ग्वालनि ।
आपुन बैठि गए तिनके सँग, सिखवहु मोहिं कहत गोपालनि ।।
काल्हि तुम्हैं गो - दुहन सिखावैं, दुहीं सबै अब गाइ ।
भोर दुहौ जनि नंद - दुहाई, उनसौं कहत सुनाइ ।।
बड़ौ भयौ, अब दुहत रहौंगौ, अपनी धेनु निबेरि ।
'सूरदास' प्रभु कहत सौंह दै, मोहिं लीजौ तुम टेरि ।।२२८।।

राग कान्हरौ

मैं दुहिहौं, मोहिं दुहन सिखावहु ।
कैसैं गहत दोहनी घुटुवनि, कैसैं बछरा थन लै लावहु ।।
कैसैं लै नोई पग बाँधत, कैसैं लै गैया अटकावहु ।
कैसैं धार दूध की बाजति, सोइ-सोइ बिधि तुम मोहिं बतावहु ।।
निपट भई, अब साँझ कन्हैया ! गैयनि पै कहुँ चोट लगावहु ।
'सूर' स्याम सौं कहत ग्वाल सब, धेनु दुहन प्रातहिं उठि आवहु ।।२२९।।

राग बिलावल

तनक कनक की दोहनी, दै-दै री मैया ।
तात दुहन सीखन कह्यौ, मोहिं धौरी गैया ।।
अटपट आसन बैठि कै, गो-थन कर लीन्हौ ।
धार अनतही देखि कै, ब्रजपति हँसि दीन्हौ ।।

घर-घर तें आईं सबै, देखन ब्रज-नारी ।
चितै चतुर चित हरि लियौ, हँसि गोप-बिहारी ॥
विप्र बोलि आसन दियौ, कह्यौ वेद उचारी ।
'सूर' स्याम सुरभी दुही, संतनि हितकारी ॥२३०॥

राग धनाश्री

दै री मैया दोहनी, दुहिहौं मैं गैया ।
माखन खाए बल भयौ, करौं नंद-दुहैया ॥
कजरी, धौरी, सेंदुरी, धूमरि मेरी गैया ।
दुहि ल्याऊँ मैं तुरत हीं, तू करि दै घैया ॥
ग्वालनि की सरि दुहत हौं, बूझहि बल भैया ।
'सूर' निरखि जननी हँसी, तब लेति बलैया ॥२३१॥

राग सारंग

बाबा मोकौं दुहन सिखायौ ।
तेरैं मन परतीति न आवै, दुहत अँगुरियनि भाव बतायौ ॥
अँगुरी-भाव देखि जननी तब, हँसिकै स्यामहिं कंठ लगायौ ।
आठ बरष के कुँवर कन्हैया, इतनी बुद्धि कहाँ तें पायौ ॥
माता लै दोहनि कर दीन्ही, तब हरि हँसत दुहन कौं धायौ ।
'सूर' स्याम कौं दुहत देखि तब, जननी मन अति हर्ष बढ़ायौ ॥२३२॥

राग धनाश्री

जननि मथति दधि, दुहत कन्हाई ।
सखा परस्पर कहत स्याम सौं, हमहू सौं तुम करत चँड़ाई ॥
दुहन देहु कछु दिन अरु मोकौं, तब करिहौ मो समसरि आई ।
जब लौं एक दुहौगे तब लौं, चारि दुहौंगौ नंद - दुहाई ॥
झूठहिं करत दुहाई प्रातहिं, देखहिंगे तुम्हरी अधिकाई ।
'सूर' स्याम कह्यौ काल्हि दुहैंगे, हमहूँ तुम मिलि होड़ लगाई ॥२३३॥

गो-चारण

माता से आग्रह करना—

राग रामकली

मैया ! हौं गाइ चरावन जैहौं ।
तू कहि महर नंद बाबा सौं, बड़ौ भयौ न डरैहौं ॥
रैता, पैता, मना, मनसुखा, हलधर संगहि रैहौं ।
बंसीबट तर ग्वालनि के सँग, खेलत अति सुख पैहौं ॥

ओदन - भोजन दै दधि काँवरि, भूख लगे तें खेहौं ।
'सूरदास' है साखि जमुन-जल, सौंह देहुँ जु नहैहौं ॥२३४॥

राग रामकली

आजु मैं गाइ चरावन जैहौं ।
बृंदावन के भाँति - भाँति फल, अपने कर मैं खैहौं ॥
ऐसी बात कहौ जनि बारे, देखौ अपनी भाँति ।
तनक - तनक पग चलिहौ कैसैं, आवत ह्वैहै राति ॥
प्रात जात गैया लै चारन, घर आवत हैं साँझ ।
तुम्हरौ कमल - बदन कुम्हिलैहै, रेंगत घामहिं माँझ ॥
तेरी सौं मोहिं घाम न लागत, भूख नहीं कछु नेक ।
'सूरदास' प्रभु कह्यौ न मानत, पर्‌यौ आपनी टेक ॥२३५॥

राग सारंग

मैं अपनी सब गाइ चरैहौं ।
प्रात होत बल के सँग जैहौं, तेरे कहैं न रैहौं ॥
ग्वाल-बाल-गाइनि के भीतर, नैंकहुँ डर नहिं लागत ।
आजु न सोवौं नंद-दुहाई, रैनि रहौंगौ जागत ॥
और ग्वाल सब गाइ चरैहैं, मैं घर बैठौ रैहौं ?
'सूर' स्याम तुम सोइ रहौ अब, प्रात जान मैं दैहौं ॥२३६॥

प्रातःकाल होने पर जागरण और कलेवा—

राग बिलावल

नंद महर के भावते, जागौ मेरे बारे ।
प्रात भयौ उठि देखिये, रवि - किरन उज्यारे ॥
ग्वाल - बाल सब टेरहीं, गैया बन चारन ।
लाल उठौ मुख धोइऐ, लागी बदन उघारन ॥
मुख तें पट न्यारौ कियौ, माता कर अपने ।
देखि बदन चकित भई, सौंतुप की सपने ॥
कहा कहौं वा रूप की, को बरनि बतावै ।
'सूर' स्याम के गुन अगम, नँद-सुवन कहावै ॥२३७॥

राग रामकली

लालहिं जगाइ बलि गई माता ।
निरखि मुख-चंद-छबि, मुदित भई मनहिं मन,
कहत आधे बचन, भयौ प्राता ॥

नैन अलसात अति, बार - बार जम्हात,
कंठ लगि जात, हरषात गाता ।
बदन पोंछियौ जल जमुन सों धोइ कै,
कह्यौ मुसुकाइ, कछु खाहु ताता ॥
दूध औट्यौ आनि, अधिक मिसिरी सानि,
लेहु माखन पानि प्रान - दाता ।
'सूर' प्रभु कियौ भोजन बिबिध भाँति सौं,
पियौ पय मोद करि घूँट साता ॥२३८॥

राग कल्यान

कब की टेरति कुँवर कन्हाई !
ग्वाल सखा सब टेरत ठाढ़े, अरु अग्रज बल भाई ॥
दाऊ जू तुम ह्याँ नहिं आवत, करौ मुखारी आइ ।
माता दुहुँनि दतौनी कर दै, जलझारी भरि ल्याइ ॥
उत्तम बिधि सों मुख पखरायौ, ओदे बसन अँगौछि ।
दोउ भैया कछु करौ कलेऊ, लई बलाइ कर औंछि ॥
सद माखन, दधि तुरत जमायौ, मधु - मेवा - मिष्टान्न ।
'सूर' स्याम - बलराम संग मिलि, रुचि करि लागे खान ॥२३९॥

राग ललित

उठे नंद - लाल सुनत जननी - मुख - बानी ।
आलस भरे नैन, सकल सोभा की खानी ॥
गोपजन बिथकित ह्वै चितवतिं सब ठाढ़ी ।
नैन करि चकोर, चंद - बदन प्रीति बाढ़ी ॥
माता जल - झारी लै, कमल - मुख पखार्‍यौ ।
नैन नीर परस करत आलसहिं बिसार्‍यौ ॥
सखा द्वार ठाढ़े सब, टेरत हैं बन कौं ।
जमुना - तट चलौ कान्ह, चारन गोधन कौं ॥
सखा सहित जेंवहु, मैं भोजन कछु कीन्हौ ।
'सूर' स्याम हलधर सँग सखा बोलि लीन्हौ ॥२४०॥

राग बिलावल

दोउ भैया जेंवत माँ आगैं ।
पुनि-पुनि लै दधि खात कन्हाई, और जननि पै माँगैं ॥
अति मीठौ दधि आजु जमायौ, बलदाऊ तुम लेहु ।
देखौ धौं दधि - स्वाद आपु लै, ता पाछैं मोहिं देहु ॥

बल मोहन दोउ जेंवत रुचि सों, सुख लूटति नँदरानी ।
'सूर' स्याम अब कहत अघाने, अँचवन माँगत पानी ॥२४१॥

राग बिलावल

करहु कलेऊ कान्ह पियारे ।
माखन-रोटी दियौ हाथ पर, बलि-बलि जाउँ जु खाहु लला रे ॥
टेरत ग्वाल द्वार हैं ठाढ़े, आए तब के होत सबारे ।
खेलहु जाइ घोप के भीतर, दूरि कहूँ जनि जैयहु बारे ॥
टेरि उठे बलराम स्याम कों, आवहु जाहिं धेनु बनु चारे ।
'सूर' स्याम कर जोरि मातु सों, गाइ-चरावन कहत हहा रे ॥२४२॥

गो-चारण का आयोजन—

राग बिलावल

मैया री, मोहिं दाऊ टेरत ।
मो कों बन-फल तोरि देत है, आपुन गैयनि घेरत ॥
और ग्वाल सँग कबहुँ न जैहौं, वे सब मोहिं खिझावत ।
मैं अपने दाऊ सँग जैहौं, बन देखैं सुख पावत ॥
आगैं दै पुनि ल्यावत घर कों, तू मोहिं जान न देति ।
'सूर' स्याम जसुमति मैया सों, हा - हा करि कहै केति ॥२४३॥

राग रामकली

चले सब गाइ चरावन ग्वाल ।
हेरी टेर सुनत लरिकनि के, दौरि गए नँदलाल ॥
फिरि इत - उत जसुमति जो देखै, दृष्टि न परै कन्हाई ।
जान्यौ जात ग्वाल सँग दौर्‌यौ, टेरति जसुमति धाई ॥
जात चल्यौ गैयनि के पाछैं, बलदाऊ कहि टेरत ।
पाछैं आवति जननी देखी, फिरि-फिरि इत कों हेरत ॥
बल देख्यौ मोहन कों आवत, सखा किए सब ठाढ़े ।
पहुँची आइ जसोदा रिस भरि, दोउ भुज पकरे गाढ़े ॥
हलधर कह्यौ, जान दै मो सँग, आवहिं आज सबारे ।
'सूरदास' बल सों कहै जसुमति, देखे रहियो प्यारे ॥२४४॥

राग सारंग

बोलि लियौ बलरामहिं जसुमति ।
लाल सुनौ हरि के गुन, काल्हिहिं तें लँगराई करत अति ॥

स्यामहिं जान देहि मेरे सँग, तू काहैं डर मानति ।
मैं अपने ढिंग तें नहिं टारौं, जियहिं प्रतीति न आनति ।।
हँसी महरि बल की बतियाँ सुनि, बलिहारी या मुख की ।
जाहु लिवाइ सूर के प्रभु कों, कहति बीर के रुख की ।।२४५।।

राग नट

अति आनंद भए हरि धाये ।
टेरत ग्वाल-बाल सब आवहु, मैया मोहिं पठाए ।।
उत तें सखा हँसत सब आवत, चलहु कान्ह बन देखहिं ।
बनमाला तुमकों पहिरावहिं, धातु-चित्र तनु रेखहिं ।।
गाइ लईं सब घेरि घरनि तें, महर गोप के बालक ।
'सूर' स्याम चले गाय चरावन, कंस-उरहिं के सालक ।।२४६।।

राग रामकली

(द्वारैं) टेरत हैं सब ग्वाल कन्हैया, आवहु बेर भई ।
आवहु बेगि, बिलम जनि लावहु, गैया दूरि गईं ।।
यह सुनतहिं दोऊ उठि धाए, कछु अँचयौ, कछु नाहिं ।
कितिक दूर सुरभी तुम छाँडी, बन तौ पहुँची नाहिं ।।
ग्वाल कह्यौ कछु पहुँची ह्वैहैं, कछू मिलहिं मग माहिं ।
'सूरदास' बल - मोहन भैया, गैयनि पूछत जाहिं ।।२४७।।

राग नट

चले बन धेनु चारन कान्ह ।
गोप-बालक कछु सयाने, नंद के सुत नान्ह ।।
हरष सों जसुमति पठाये, स्याम-मन आनँद ।
गाइ गो - सुत गोप-बालक, मध्य श्री नँद-नंद ।।
सखा हरि कों यह सिखावति, छाँड़ि जिनि कहुँ जाहु ।
सघन बृंदावन अगम अति, जाइ कहुँ न भुलाहु ।।
'सूर' के प्रभु हँसत मन में, सुनत हीं यह बात ।
मैं कहूँ नहिं संग छाँड़ौं, बनहिं बहुत डरात ।।२४८।।

राग धनाश्री

हेरी देत चले सब बालक ।
आनँद सहित जात हरि खेलत, संग मिले पसु-पालक ।।
कोउ गावत, कोउ बेनु बजावत, कोउ नाचत, कोउ धावत ।
किलकत कान्ह देखि यह कौतुक, हरषि सखा उर लावत ।।

भलो करी तुम मोकौं ल्याए, मैया हरषि पठाए ।
गोधन- बृंद लिए ब्रज-बालक, जमुना-तट पहुँचाए ॥
चरतिं धेनु अपने-अपने रँग, अतिहिं सघन बन चारौ ।
'सूर' संग मिलि गाइ चरावत, जसुमति कौ सुत बारौ ॥२४६॥

राग बिलावल

खेलत कान्ह चले ग्वालनि संग ।
जसुमति यहै कहत घर आई, हरि कीन्हे कैसे रँग ।
प्रातहिं तें लागे याही ढँग, अपनी टेक कर्‌यौ है ।
देखौ जाइ आजु बन कौ सुख, कहा परोसि धर्‌यौ है ॥
माखन - रोटी अरु सीतल जल, जसुमति दियौ पठाइ ।
'सूर' नंद हँसि कहत महरि सौं, आवत कान्ह चराइ ॥२५०॥

राग सारंग

बृंदावन देख्यौ नँद - नंदन, अतिहिं परम सुख पायौ ।
जहँ-जहँ गाइ चरतिं, ग्वालनि सँग, तहँ-तहँ आपुन धायौ ॥
बलदाऊ मोकौं जनि छाँड़ौ, संग तुम्हारे ऐहौं ।
कैसेहुँ आजु जसोदा छाँड़्यौ, काल्हि न आवन पैहौं ॥
सोवत मोकौं टेरि लेहुगे, बाबा नंद - दुहाई ।
'सूर' स्याम बिनती करि बल सौं, सखनि समेत सुनाई ॥२५१॥

राग बिलावल

बन पहुँचत सुरभी लई जाइ ।
जैहौ कहा सखनि कौं टेरत, हलधर संग कन्हाइ ॥
जेंवत परखि लियौ नहिं हमकौं, तुम अति करी चँड़ाइ ।
अब हम जैहैं दूरि चरावन, तुम सँग रहैं बलाइ ॥
यह सुनि ग्वाल धाइ तहँ आए, स्यामहिं अंकम लाइ ।
सखा कहत यह नंद-सुवन सौं, तुम सब के सुखदाइ ॥
आजु चलौ बृंदावन जैऐ, गैयाँ चरैं अघाइ ।
'सूरदास' प्रभु सुनि हरषित भए, घर तें छाक मँगाइ ॥२५२॥

राग बिलावल

आजु चरावन गाइ चलौ जू, कान्ह! कुमुद-बन जैऐ ।
सीतल कुंज कदम की छहियाँ, छाक छहूँ रस खैऐ ॥
अपनी - अपनी गाइ ग्वाल सब, आनि करौ इक ठौरी ।
धौरी, धूमरि, राती, रौंछी, बोल बुलाइ चिन्हौरी ॥

पियरी, मौरी, गोरी, गैनी, खैरी, कजरी जेती ।
दुलही, फुलही, भौंरी, भूरी, हाँकि ठिकाई तेती ॥
बाबा नंद बुरौ मानैंगे, और जसोदा मैया ।
'सूरजदास' जनाइ दियौ है, यह कहिकै बल भैया ॥२५३॥

राग बिलावल

चले सब बृंदावन समुहाइ ।
नंद-सुवन सब ग्वालनि टेरत, ल्यावहु गाइ फिराइ ॥
अति आतुर ह्वै फिरे सखा सब, जहँ-तहँ आए धाइ ।
पूछत ग्वाल, बात किहिं कारन, बोले कुँवर कन्हाइ ॥
सुरभी बृंदावन कौं हाँकौ, औरनि लेहु बुलाइ ।
'सूर' स्याम यह कही सबनि सौं, आपु चले अतुराइ ॥२५४॥

राग धनाश्री

गैयनि घेरि सखा सब ल्याए ।
देख्यौ कान्ह जात बृंदावन, यातैं मन अति हरप बढ़ाए ॥
आपुस में सब करत कुलाहल, धौरी - धूमरि धेनु बुलाए ।
सुरभी हाँकि देत सब जहँ-तहँ, टेरि-टेरि हेरी सुर गाए ॥
पहुँचे आइ बिपिन घन बृंदा, देखत द्रुम दुख सबनि गँवाए ।
'सूर'स्याम गए अघा मारि जब,ता दिन तैं इहिं बन अब आए ॥२५५॥

राग नटनारायन

चरावत बृंदावन हरि धेनु ।
ग्वाल सखा सब संग लगाए, खेलत हैं करि चैनु ॥
कोउ गावत,कोउ मुरलि बजावत, कोउ बिषान, कोउ बेनु ।
कोउ निरतत,कोउ उघटि तार दै, जुरी ब्रज-बालक-सेनु ॥
त्रिबिध पवन जहँ बहत निसा-दिन,सुभग कुंज घन ऐनु ।
'सूर' स्याम निज धाम बिसारत, आवत यह सुख लैनु ॥२५६॥

राग देवगंधार

द्रुम चढ़ि काहे न टेरौ कान्हा, गैयाँ दूरि गईं ।
धाई जातिं सबनि के आगैं, जे बृषभानु दईं ॥
घेरे घिरतिं न तुम बिनु माधौ, मिलतिं न बेगि दईं ।
बिडरतिं फिरतिं सकल बन महियाँ, एकै एक भईं ॥
छाँड़ि खेल सब दौरि जात हैं, बोलौ ज्यौं सिखईं ।
'सूरदास' प्रभु-प्रेम समुझि कै, मुरली सुनि आइ गईं ॥२५७॥

राग मारू

कहि-कहि टेरत धौरी-कारी ।
देखौ धन्य भाग गाइनि के, प्रीति करत बनवारी ॥
मोटी भई चरत बृंदावन, नंद - कुँवर की पालीं ।
काहे न दूध देहिं ब्रज - पोषन, हस्त - कमल की लालीं ॥
वेनु स्रवन सुनि गोवर्धन तें, तृन दंतनि धर चालीं ।
आईं वेगि 'सूर' के प्रभु पै, ते क्यों भजें जे पालीं ॥२५८॥

छाक—

राग नट

छाक लैन जे ग्वाल पठाए ।
तिनसों पूछति महरि जसोदा, छाँड़ि कान्ह कित आए ॥
हमहिं पठाइ दिए नँद-नंदन, भूखे अति अकुलाए ।
धेनु चरावत हैं बृंदावन, हम इहिं कारन आए ॥
यह कहि ग्वाल गए अपने गृह, बन की खबरि सुनाए ।
'सूर' स्याम-बलराम प्रात ही, अधजेंवत उठि धाए ॥२५९॥

राग सारंग

और ग्वाल सब ही गृह आए, गोपालहिं बेर भई ।
अतिहिं अबेर भई लालन कों, अजहूँ नहिं छाक गई ॥
तब ही तें भोजन करि राख्यौ, उत्तम दूध जमाइ ।
ना जानौं धौं कान्ह कौन बन, चारत बेर लगाइ ॥
राज करैं वे धेनु तुम्हारी, नंदहिं कहति सुनाइ ।
पंच की भीख 'सूर' बल-मोहन, कहति जसोमति माइ ॥२६०॥

राग सारंग

जोरति छाक प्रेम सों मैया ।
ग्वालनि बोलि लियो अधजेंवत, उठि दौरे दोउ भैया ॥
तब ही तें मैं भोजन कीन्हौ, चाहति दियौ पठाइ ।
भूखे भए आजु दोउ भैया, आपुहि बोलि मँगाइ ॥
सद माखन साजौ दधि मीठौ, मधु, मेवा, पकवान ।
'सूर' स्याम कों छाक पठावति, कहति ग्वारि सों जान ॥२६१॥

राग सारंग

घर ही की इक ग्वारि बुलाई ।
छाक समग्री सबै जोरि कै, वाके कर दै तुरत पठाई ॥

कह्यौ ताहि वृंदावन जैऐ, तू जानति सब प्रकृति कन्हाई।
प्रेम सहित लै चली छाक वह, कहँ ह्वै हैं भूखे दोउ भाई॥
तुरत जाइ वृंदावन पहुँची, ग्वाल-बाल कहुँ कोउ न बताई।
'सूर' स्याम कों टेरत डोलति, कित हौ लाल! छाक मैं लाई॥२६२॥

राग सारंग

हरि कों टेरत फिरति गुवारि।
आइ लेहु तुम छाक आपनी, बालक बल-बनवारि॥
आजु कलेऊ करत बन्यौ नहिं, गैयनि सँग उठि धाए।
तुम कारन बन छाक जसोदा, मेरे हाथ पठाए॥
यह बानी जब सुनी कन्हैया, दौरि गए तिहिं काजु।
'सूर' स्याम कह्यौ नीकैं आई, भूख बहुत ही आजु॥२६३॥

राग सारंग

बहुत फिरी तुम काज कन्हाई।
टेरि-टेरि मैं भई बावरी, दोउ भैया तुम रहे लुकाई॥
जे सब ग्वाल गए ब्रज घर कों, तिनसों कहि तुम छाक मँगाई।
लवनी, दधि, मिष्टान्न जोरि कै, जसुमति मेरे हाथ पठाई॥
ऐसी भूख माँझ तू ल्याई, तेरी किहिं बिधि करौं बड़ाई।
'सूर' स्याम सब सखनि पुकारत, आवत क्यों न, छाक है आई॥२६

राग सारंग

गिरि पर चढ़ि, गिरिवर-धर टेरे।
अहो सुबल, श्रीदामा भैया! ल्यावहु गाइ खरिक के नेरे॥
आई छाक अबार भई है, नैंसुक धैया पिएउ सबेरे।
'सूरदास' प्रभु बैठि सिला पर, भोजन करैं ग्वाल चहुँफेरे॥२६५॥

राग सारंग

हरि जू कों ग्वालिनि भोजन ल्याई।
वृंदाविपिन बिसद जमुना-तट, सुचि ज्योंनार बनाई॥
सानि-सानि दधि भात लियौ कर, सुहृद सखनि कर देत।
मध्य-गोपाल-मंडली मोहन, छाक बाँटि कै लेत॥
देवलोक देखत सब कौतुक, बाल-केलि अनुरागे।
गावत सुनत सुजस सुख करि मन, 'सूर' दुरित-दुख भागे॥२६६॥

राग सारंग

आई छाक बुलाए स्याम।
यह सुनि सखा सबै जुरि आए, सुबल, सुदामा अरु श्रीदाम॥

कमल - पत्र दौना पलास के, सब आगैं धरि परुसत जात ।
ग्वाल-मंडली मध्य स्याम-घन,सब मिलि भोजन रुचि करि खात ।।
ऐसी भूख माहिं यह भोजन, पठै दियौ है जसुमति मात ।
'सूर' स्याम अपनो नहिं जेंवत, ग्वालनि कर तें, लै-लै खात ।।२६७।।

राग सारंग

सखनि संग जेंवत हरि छाक ।
प्रेम सहित मैया दै पठई, सबै बनाई है इक ताक ।।
सुबल,सुदामा, श्रीदामा मिलि, सब सँग भोजन रुचि करि खात ।
ग्वालनि कर तें कौर छुड़ावत, मुख लै मेलि सराहत जात ।।
जो सुख कान्ह करत वृंदावन, सो सुख नहीं लोकहूँ सात ।
'सूर' स्याम भक्तनि बस ऐसें, ब्रह्म कहावत हैं नँद-तात ।।२६८।।

राग सारंग

ग्वाल मंडली में बैठे मोहन बट की छाँह,
दुपहर बेरिया सखानि संग लीने ।
एक दूध-फल, एक झगरि चबैना लेत,
निज-निज कामरी के आसननि कीने ।।
जेंवतऽरु गावत हैं सारंग की तान कान्ह,
सखनि के मध्य छाक लेत कर छीने ।
'सूरदास' प्रभु कों निरखि, सुख रीझि-रीझि,
सुर सुमननि बरसत रस भीने ।।२६९।।

राग सारंग

ग्वालनि कर तें कौर छुड़ावत ।
जूठौ लेत सबनि के मुख कौ, अपने मुख लै नावत ।।
षटरस के पकवान धरे सब, तिनमें रुचि नहिं लावत ।
हा-हा करि-करि माँगि लेत हैं, कहत मोहिं अति भावत ।।
यह महिमा येई पै जानत, जातें आपु बँधावत ।
'सूर' स्याम सपनें नहिं दरसत, मुनि जन ध्यान लगावत ।।२७०।।

राग सारंग

जेंवत छाक गाइ बिसराई ।
सखा श्रीदामा कहत सबनि सों, छाकहि में तुम रहे भुलाई ।।
धेनु नहीं देखियत कहुँ नियरैं, भोजन ही में साँझ कराई ।
सुरभी काज जहाँ-तहँ धाए, आपु तहाँ उठि चले कन्हाई ।।

ल्याए ग्वाल घेरि गो, गो-सुत, देखि स्याम मन हरप बढ़ाई ।
'सूरदास' प्रभु कहत चलौ घर, बन में आजु अबार लगाई ॥२७१॥

राग गौरी

ब्रजहिं चलौ आई अब साँझ ।
सुरभी सबै लेहु आगैं करि, रैनि होइ जनि बनहीं माँझ ॥
भली कही यह बात कन्हाई, अतिहीं सघन अरन्य उजारि ।
गैया हाँकि चलाईं ब्रज कों, और ग्वाल सब लए पुकारि ॥
निकसि गए बन तें जब बाहिर, अति आनंद भए सब ग्वाल ।
'सूरदास' प्रभु मुरलि बजावत,ब्रज आवत नटवर गोपाल ॥२७२॥

बन से वापिस आना— राग गौरी

बन तें आवत धेनु चराए ।
संध्या समय साँवरे मुख पर, गो - पद - रज लपटाए ।
बरह-मुकट के निकट लसति लट, मधुप मनौ रुचि पाए ॥
बिलसत सुधा जलज-आनन पर, उड़त न जात उड़ाए ।
बिधि - बाहन - भच्छन की माला, राजत उर पहिराए ॥
एक बरन बपु, नहिं बड़ छोटे, ग्वाल बने इक धाए ।
'सूरदास' बलि लीला प्रभु की, जीवत जन जस गाए ॥२७३॥

राग गौरी

नटवर-वेष धरे ब्रज आवत ।
मोर मुकुट, मकराकृत कुंडल, कुटिल अलक मुख पर छबि पावत ॥
भ्रकुटी बिकट , नैन अति चंचल, इहिं छबि पर उपमा इक धावत ।
धनुप देखि खंजन बिबि डरपत, उड़ि न सकत उड़िबे अकुलावत ॥
अधर अनूप मुरलि-सुर पूरत, गौरी राग अलापि बजावत ।
सुरभी - बृंद, गोप - बालक - संग गावत, अति आनंद बढ़ावत ॥
कनक-मेखला, कटि पीतांबर, निर्तन मंद - मंद सुर गावत ।
'सूर' स्याम-प्रति-अंग-माधुरी, निरखत ब्रज-जन के मन भावत ॥२७४॥

राग गौरी

बे मुरली की टेर सुनावत ।
बृंदावन सब बासर बसि, निसि-आगम जानि,चले ब्रज आवत ॥
सुबल, सुदामा, श्रीदामा सँग, सखा मध्य मोहन छबि पावत ।
सुरभी-गन सब लै आगैं करि, कोउ टेरत, कोउ बेनु बजावत ॥
केकी-पच्छ-मुकुट सिर भ्राजत, गौरी राग मिले सुर गावत ।
'सूर' स्याम के ललित बदन पर, गोरज-छबि कछु चंद छुपावत ॥२७५॥

राग कल्यान

ब्रज-जुवती सब कहतिं परस्पर, बन तें स्याम बने ब्रज आवत ।
ऐसी छवि मैं कबहुँ न पाई, सखी सखी सों प्रगट दिखावत ॥
मोर मुकुट सिर, जलज-माल उर, कटि-तट पीतांबर छवि पावत ।
नव जलधर पर इंद्र-चाप मनु, दामिनि-छवि, बलाक बन धावत ॥
जिहिं जो अंग अवलोकन कीन्हौ, सो तन-मन तहँई बिरमावत ।
'सूरदास' प्रभु मुरली अधर धरे, आवत राग कल्यान बजावत ॥२७६॥

राग गौरी

देखि सखी बन तें जु बने, ब्रज आवत है नँद नंदन ।
सिखी सिखंड सीस, मुख मुरली, बन्यौ तिलक, उर चंदन ॥
कुटिल अलक मुख, चंचल लोचन, निरखत अति आनंदन ।
कमल मध्य मनु द्वै खग खंजन, बँधे आइ उड़ि फंदन ॥
अरुन अधर-छवि दसन बिराजत, जब गावत कल मंदन ।
मुक्ता मनौ नील-मनि-मय-पुट, धरे मुरकि बर बंदन ॥
गोप बेष गोकुल गो चारत, हैं हरि असुर-निकंदन ।
'सूरदास' प्रभु सुजस बखानत, नेति - नेति स्रुति-छंदन ॥२७७॥

राग गौरी

देखौ री, नँद-नंदन आवत ।
बृंदावन तें धेनु-बृंद में, बेनु अधर धरे गावत ॥
तन घन स्याम, कमल-दल-लोचन, अंग-अंग छवि पावत ।
कारी, गोरी, धौरी, धूमरि, लै - लै नाम बुलावत ॥
बाल गोपाल संग सब सोभित, मिलि कर-पत्र बजावत ।
'सूरदास' मुख निरखतहीं सुख, गोपी प्रेम बढ़ावत ॥२७८॥

राग गौरी

साँवरौ मनमोहन माई ।
देखि सखी बन तें ब्रज आवत, सुंदर नंद-कुमार कन्हाई ॥
मोर-पंख सिर मुकुट बिराजत, मुख मुरली-धुनि सुभग सुहाई ।
कुंडल लोल, कपोलनि की छबि, मधुरी बोलनि बरनि न जाई ॥
लोचन ललित, ललाट भृकुटि बिच, तकि मृगमद की रेख बनाई ।
मनु मरजाद उलंघि अधिक बल, उमँगि चली अति सुंदरताई ॥
कुंचित केस सुदेस, कमल पर मनु मधुपनि - माला पहिराई ।
मंद-मंद मुसुक्यानि, मनौ घन दामिनि दुरि-दुरि देति दिखाई ॥
सोभित 'सूर' निकट नासा के, अनुपम अधरनि की अरुनाई ।
मनु सुक सुरँग बिलोकि बिंब-फल, चाखन कारन चोंच चलाई ॥२७९॥

राग गौरी

रजनी-मुख बन तें बने आवत, भावति मंद गयंद की लटकनि ।
बालक-बृंद बिनोद-हँसावत, करतल लकुट धेनु की हटकनि ॥
बिगसित गोपी मनौ कुमुद सर, रूप-सुधा लोचन-पुट घटकनि ।
पूरन कला उदित मनु उड़पति, तिहिं छन बिरह-तिमिर की झटकनि ॥
लज्जित मनमथ निरखि बिमल छबि, रसिक रंग भौंहनि की मटकनि ।
मोहनलाल, छबीलो गिरिधर, 'सूरदास' बलि नागर नटकनि ॥२८०॥

राग केदारौ

सोभा कहत, कही नहिं आवै ।
अँचवत अति आतुर लोचन-पुट, मन न तृप्ति कौं पावै ॥
सजल मेघ घनस्याम सुभग वपु, तड़ित बसन बनमाल ।
सिखि-सिखंड, बन-धातु बिराजत, सुमन सुगंध प्रवाल ॥
कछुक कुटिल कमनीय सघन अति, गो-रज मंडित केस ।
सोभित मनु अंबुज पराग-रुचि-रंजित मधुप सुदेस ॥
कुंडल-किरनि कपोल लोल छबि, नैन कमल-दल-मीन ।
प्रति-प्रति अंग अनंग-कोटि-छबि, सुनि सखि परम प्रबीन ॥
अधर मधुर मुसुक्यानि मनोहर, करति मदन-मन हीन ।
'सूरदास' जहँ दृष्टि परति है, होति तहीं लवलीन ॥२८१॥

राग गौरी

हरि आवत गाइनि के पाछे ।
मोर-मुकुट, मकराकृति कुंडल, नैन बिसाल कमल तें आछे ॥
मुरली अधर धरन सीखत हैं, बनमाला पीतांबर काछे ।
ग्वाल-बाल सब बरन-बरन के, कोटि मदन की छबि किए पाछे ॥
पहुँचे आइ स्याम ब्रज पुर में, घरहिं चले मोहन-बल आछे ।
'सूरदास' प्रभु दोउ जननी मिलि, लेतिं बलाइ बोलि मुख बाछे ॥२८२॥

राग कान्हरौ

आजु बने बन तें ब्रज आवत ।
नाना रंग सुमन की माला, नँद-नंदन-उर पर छबि पावत ॥
संग गोप, गोधन-गन लीन्हें, नाना गति कौतुक उपजावत ।
कोउ गावत, कोउ नृत्य करत, कोउ उघटत, कोउ करताल बजावत ॥
राँभति गाइ बच्छ हित सुधि करि, प्रेम उमँगि थन दूध चुवावत ।
जसुमति बोलि उठी हरषित ह्वै, कान्हा धेनु चराए आवत ॥
इतनी कहत आइ गए मोहन, जननी दौरि हिए लै लावत ।
'सूर' स्याम के कृत्य जसोमति, ग्वाल-बाल कहि प्रगट सुनावत ॥२८३॥

माता की गोद में

घर पहुँचने पर—

राग गौरी

बल-मोहन बन तें दोउ आए ।
जननि जसोदा, मातु रोहिनी, हरषित कंठ लगाए ।।
काहैं आजु अबार लगाई, कमल बदन कुम्हिलाए ।
भूखे भए आजु दोउ भैया, करन कलेउ न पाए ।।
देखहु जाइ कहा जे बन कियौ, रोहिनि तुरत पठाई ।
मैं अन्हवाए देति दुहुँनि कौं, तुम अति करौ चँड़ाई ।।
लकुट लियौ, मुरली कर लीन्हीं, हलधर दियौ बिपान ।
नीलांबर - पीतांबर लीन्हे, सैंति धरति करि प्रान ।।
मुकुट उतारि धर्‌यौ लै मंदिर, पोंछति है अँग-धातु ।
अरु बनमाल उतारति गर तें, 'सूर' स्याम की मातु ।।२८४।।

राग कल्यान

अंग-अभूपन जननि उतारति ।
दुलरी, ग्रीव-माल मोतिनि की, लै केयूर भुज स्याम निहारति ।।
छुद्रावली उतारति कटि तें, सैंति धरति मनहीं मन वारति ।
रोहिनि भोजन करौ चँड़ाई, बार-बार कहि-कहि करि आरति ।।
भूखे भए स्याम-हलधर दोउ, यह कहि अंतर प्रेम बिचारति ।
'सूरदास' प्रभु मातु जसोदा, पट लै, दुहुनि अंग-रज झारति ।।२८५।।

राग गौरी

जसुमति दौरि लिए हरि कनियाँ ।
आजु गयौ मेरौ गाइ चरावन, हौं बलि जाउँ निछनियाँ ।।
मो कारन कछु आन्यौ है बलि, बन-फल तोरि नन्हैया ।
तुमहिं मिलैं मैं अति सुखौ पायौ, मेरे कुँवर कन्हैया ।।
कछुक खाहु जो भावै मोहन, दै री माखन - रोटी ।
'सूरदास' प्रभु जीवहु जुग-जुग, हरि-हलधर की जोटी ।।२८६।।

भोजन का आयोजन—

राग सारंग

भूखौ भयौ आजु मेरौ बारौ ।
भोरहिं ग्वारि उरहनौ ल्याई, उहिं यह कियौ पसारौ ।।
पहिलेहिं रोहिनि सौं कहि राख्यौ, तुरत करहु जेवनार ।
ग्वाल-बाल सब बोलि लिए, मिलि बैठे नंद-कुमार ।।

भोजन बेगि ल्याउ कछु मैया ! भूख लगी मोहिं भारी ।
आजु सवारैं कछु नहिं खायौ, सुनत हँसी महतारी ॥
रोहिनि चितै रही जसुमति-तन, सिर धुनि-धुनि पछितानी ।
परसहु बेगि, बेर कत लावति, भूखे सारँगपानी ॥
बहु ब्यंजन, बहु भाँति रसोई, षटरस के परकार ।
'सूर' स्याम-हलधर दोउ भैया, और सखा सब ग्वार ॥२८७॥

राग सारंग

नंद-भवन में कान्ह अरोगैं । जसुदा ल्यावै षटरस भोगैं ॥
आसन दै, चौकी आगैं धरि । जमुना-जल राख्यौ झारी भरि ॥
कनक-थार में हाथ धुवाए । सबह सौ भोजन तहँ आए ॥
लै-लै धरति सबनि के आगैं । मातु परोसै, जो हरि माँगैं ॥
खीर, खाँड़, घृत, लावनि, लाडू । ऐसे होहिं न अमृत खाँडू ॥
और लेहु कछु सुत ब्रज-राजा । लुचुई, लपसी, घेवर, खाजा ॥
पेठापाक, जलेबी, कौरी । गोंदपाक, तिनगरी, गिदौरी ॥
गुझा, इलाचीपाक, अमिरती । सीरा साजो लेहु ब्रजपती ॥
डालि धरे खरबूजा, केरा । सीतल बास करत अति घेरा ॥
खरिक, दाख अरु गरी, चिरारी । पिंड बदाम लेहु बनवारी ॥
बेसन-पुरी, सुख-पुरी लीजै । आछौ दूध कमल-मुख पीजै ॥
मैया मोहिं और क्यों प्यावै । धौरी कौ पय मोहिं अति भावै ॥
बेला भरि हलधर कों दीन्हौ । पीवत पय अस्तुति बल कीन्हौ ॥
ग्वाल सखा सबहीं पय अँचयौ । नीकैं औटि जसोदा रचयौ ॥
दोना मेलि धरे हैं सूआ । हौंस होइ तौ ल्याऊँ पूआ ॥
मीठे अति कोमल हैं नीके । ताते, तुरत चभोरे घी के ॥
फैनी, सेव, अँदरसे प्यारे । लै आवौं, जैंवौ मेरे बारे ॥
हलधर कहत ल्याउ री मैया ! मोकौं दै, नहिं लेत कन्हैया ॥
जसुमति हरष भरी लै परसति । जेंवत हैं अपनी रुचि सों अति ॥
राम माँगि सीतल जल लीयौ । भोजन बीच नीर लै पीयौ ॥
भात पसाइ रोहिनी ल्याई । घृत सुगंधि तुरतै दै ताई ॥
सोंधावनौ चाँवर दिव-दुर्लभ । भात परोस्यौ माता सुरलभ ॥
मूँग, मसूर, उरद, चनदारी । कनक-फटक धरि फटकि पछारी ॥
रोटी, बाटी, पोरी, झोरी । इक कोरी, इक घीव चभोरी ॥
मारी-तुन भरि भरी बरौरी । कछु खारी, कछु फीकैं छोरी ॥
सौंठि मेल तना की भाजी । एक सकुनी दै मोहिं साजी ॥

मीठे चरपर उज्ज्वल कूरा। हौंस होइ तौ ल्याऊँ मूरा ॥
मूँग-पकौरा पनौ पतवरा। इक कोरे, इक भिजे गुरवरा ॥
पापर, वरी, मिथौरि, फुलौरी। कूर, वरी, काचरी, पिठौरी ॥
बहुत मिरच दै किए निमौना। बेसन के दस-बीसक दौना ॥
बन कौरा पिंडीक चिचिंडी। सीप पिंड़ारू, कोमल भिंडी ॥
चौराई, लाल्हा अरु पोई। मध्य मेलि निवुआनि निचोई ॥
रुचिर लजालु लोनिका फाँगी। कढ़ी कृपालु दूसरैं माँगी ॥
सरसौं, मेथी, सोवा, पालक। वथुआ राँधि लियौ जु उतालक ॥
हींग-हरद-मिरच छौंके तेले। अदरख और आँवरे मेले ॥
सालन सकल कपूर सुवासत। स्वाद लेत सुंदर हरि ग्रासत ॥
आँव आदि दै सबै सँधाने। सब चाखे गोवर्धन-राने ॥
कान्ह कह्यौ हौं मातु अघानौ। अब मोकों सीतल जल आनौ ॥
अँचवन लै तब धोए कर मुख। सेष न वरनै भोजन कौ सुख ॥
उज्ज्वल पान, कपूर, कस्तुरी। आरोगत मुख की छवि रूरी ॥
चंदन अंग सखनि कें चरच्यौ। जसुमति के सुख कौं नहिं परच्यौ ॥
जूठनि माँगि 'सूर' जन लीन्हौ। बाँटि प्रसाद सबनि कौं दीन्हौ ॥
जन्म-जन्म बाढ़्यौ जूठनि कौ। चेरौ नंद महर के धन कौ ॥२८८॥

राग गौरी

माखन-रोटी ताती-ताती लेहु कन्हैया बारे।
मन में रुचि उपजावै-भावै, त्रिभुवन के उजियारे!
और लेहु पकवान-मिठाई, बहु विधि व्यंजन सारे।
औट्यौ दूध, सद्य दधि,घृत, मधु रुचि सों खाहु लला रे!
तव हरि उठिके करी वियारी, भक्तनि-प्रान-पियारे।
'सूर' स्याम भोजन करि के, सुचि जल सों वदन पखारे ॥२८९॥

राग केदारौ

चलौ लाल! कछु करौ वियारी।
रुचि नाहीं काहू पर मेरी, तू कहि, भोजन करौं कहा री?
बेसन मिले सरस मैदा सों, अति कोमल पूरी है भारी।
जेंवहु स्याम मोहिं सुख दीजै, तातें करी तुम्हें ये प्यारी ॥
निवुआ,सूरन,आम,अथानौ,और करौंदनि की रुचि न्यारी।
वार-वार यों कहति जसोदा, कहि ल्यावै रोहिनि महतारी ॥
जननी सुनत तुरत लै आई, तनक-तनक धरि कंचन-थारी।
'सूर'स्याम कछु-कछु लै खायौ,अरु अँचयौ जल वदन पखारी ॥२९०॥

ी कृष्ण का यशोदा से—

राग गौरी

मैया ! हौं न चरैहौं गाइ ।
सिगरे ग्वाल घिरावत मोसौं, मेरे पाइँ पिराइँ ॥
जौ न पत्याहि पूछि बलदाउहिं, अपनी सौंह दिवाइ ।
यह सुनि माइ जसोदा ग्वालनि गारी देति रिसाइ ॥
मैं पठवति अपने लरिका कौं, आवै मन बहराइ ।
'सूर' स्याम मेरौ अति बालक, मारत ताहि रिंगाइ ॥२९१॥

राग गौरी

मैया ! बहुत बुरौ बलदाऊ ।
कहन लग्यौ बन बड़ौ तमासौ, सब मौड़ा मिलि आऊ ॥
मोहू कौं चुचकारि गयौ लै, जहाँ सघन बन झाऊ ।
भागि चलौ, कहि गयौ उहाँ तें, काटि खाइ रे हाऊ ॥
हौं डरपौं, काँपौं अरु रोवौं, कोउ नहिं धीर धराऊ ।
थरसि गयौ नहिं भागि सकौं, वे भागे जात अगाऊ ॥
मोसौं कहत मोल कौ लीनौ, आपु कहावत साऊ ।
'सूरदास' बल बड़ौ चबाई, तैसेहिं मिले सखाऊ ॥२९२॥

ाता का लाड़-प्यार—

राग आसावरी

सुनि मैया ! मैं तौ पय पीवौं, मोहिं अधिक रुचि आवै री ।
आजु सवारैं धेनु दुही मैं, वहै दूध मोहिं प्यावै री ॥
और धेनु कौ दूध न पीवौं, जो करि कोटि बनावै री ।
जननी कहति दूध धौरी कौ, पुनि - पुनि सौंह करावै री ॥
तुम तैं मोहिं और को प्यारौ, बारंबार मनावै री ।
'सूर' स्याम कौं पय धौरी कौ, माता हित सौं ल्यावै री ॥२९३॥

राग गौरी

आछौ दूध पियौ मेरे तात !
तातौ लगत बदन नहिं परसत, फूँक देति है मात ॥
औटि धर्यौ है अबहीं मोहन ! तुम्हरैं हेत बनाइ ।
तुम पीवौ, मैं नैननि देखौं, मेरे कुँवर कन्हाइ !
दूध अकेली धौरी कौ यह, तन कौं अति हितकारि ।
'सूर' स्याम पय पीवन लागे, अति तातौ दियौ डारि ॥२९४॥

राग कल्यान

ये दोऊ मेरे गाइ चरैया।
मोल बिसाहि लियौ मैं तुमकों, जब दोउ रहे नन्हैया॥
तुमसों टहल करावति निसि-दिन, और न टहल करैया।
यह सुनि स्याम हँसे कहि दाऊ, झूठ कहति है मैया॥
जानि परत नहिं साँच झुठाई, चारत धेनु झुरैया।
'सूरदास' जसुदा मैं चेरी, कहि-कहि लेति बलैया॥२६५॥

राग कल्यान

यह कहि जननि दुहुँनि उर लावति।
सुमना-सत अँग परसि, तरनि-जल, बलि-बलि गई कहि-कहि अन्हवावति॥
सरस बसन तन पोंछि गई लै, पट रस की ज्योंनार जिवावति।
सीतल जल कपूर-रस रच्यौ, झारी कनक लिए अँचवावति॥
भर्‍यौ चुरू मुख धोइ तुरत हीं, पीरे-पान-बिरी मुख नावति।
'सूर' स्याम सुख जननि मुदित मन, सेज्जा पर सँग लै पौढ़ावति॥२६६॥

राग बिहागरौ

सोवत नींद आइ गई स्यामहिं।
महरि उठी पौढ़ाइ दुहूँनि कों, आपु लगी गृह-कामहिं॥
बरजति है घर के लोगनि कों, हरुएँ लै-लै नामहिं।
गाढ़ैं बोलि न पावत कोऊ, डर मोहन-बलरामहिं॥
सिव-सनकादि अंत नहिं पावत, ध्यावत अह-निसि-जामहिं।
'सूरदास' प्रभु ब्रह्म सनातन, सो सोवत नँद-धामहिं॥२६७॥

राग बिहागरौ

देखत नंद कान्ह अति सोवत।
भूखे भए आजु बन-भीतर, यह कहि-कहि मुख जोवत॥
कह्यौ नहीं मानत काहू कौ, आपु हठी दोउ बीर।
बार-बार तनु पोंछत कर सों, अतिहिं प्रेम की पीर॥
सेज मँगाइ लई तहँ अपनी, जहाँ स्याम-बलराम।
'सूरदास' प्रभु के ढिग सोए, सँग पौढ़ी नँद-बाम॥२६८॥

वृंदावन-महिमा

राग सारंग

माधौ ! मोहिं करौ वृंदावन-रेनु ।
जिहिं चरननि डोलत नँद-नंदन, दिन-प्रति बन-बन चारत धेनु ॥
कहा भयौ यह देव-देह धरि, अरु ऊँचे पद पाएँ ऐनु ।
सब जीवनि लै उदर माँझ प्रभु, महा प्रलय-जल करत हौ सैनु ॥
हम तें धन्य सदा वे तृन-द्रुम, बालक-बच्छ-बिषानऽरु बेनु ।
'सूर' स्याम जिनके सँग डोलत, हँसि बोलत, मथि पीवत फेनु ॥२९९॥

राग सारंग

धनि यह वृंदावन की रेनु ।
नंद-किसोर चरावत गैयाँ, मुखहिं बजावत बेनु ॥
मन-मोहन कौ ध्यान धरैं जिय, अति सुख पावत चैनु ।
चलत कहाँ मन और पुरी तन, जहाँ कछु लैन न दैनु ॥
इहाँ रहहु जहँ जूठनि पावहु, ब्रजबासिनि के ऐनु ।
'सूरदास' ह्याँ की सरवरि नहिं, कल्पब्रृच्छ सुर-धेनु ॥३००॥

परिशिष्ट

बाल-लीला संबंधी कुछ नवीन पद*

पलना-झूलन—　　　☆

पलना नंद महर घर आयौ ।
दिव्य कनिक बहु रतन अमोलन, हीरा बहुत जरायौ ॥
गजमोतिन के झुमका बनाए, दच्छिन चीर बिछायौ ।
नख-सिख लौं सिंगार संवारौ, पुलकित प्रेम झुलायौ ॥
जसुमति अति आनंदित बदनी, विप्रन दान दिवायौ ।
ब्रज-नारी आईं झुंडनि मिलि, हरषित मंगल गायौ ॥
सुर-नर-मुनि सब कौतिक भूले, गगन विमाननि छायौ ।
'सूरदास' प्रभु सिसु ह्वै पौढ़े, गिरधर नाम धरायौ ॥१॥

राग रामकली

गोपाल माई पालनैं झुलायौ ।
सुर, मुनि, देव कोटि तेतीसौं, कौतिक अंबर छायौ ॥
जाकौ अंत न ब्रह्मा पावै, सिव - सनकादि न पायौ ।
सो सुत देख्यौ नंद - जसोदा, गोद में वालि खिलायौ ॥
नाँचत, हँसत, भरत किलकारी, मन अभिलाष बढ़ायौ ।
'सूरदास' भक्तन हित कारन, नाना भेष बनायौ ॥२॥

---

* सूर-साहित्य का अन्वेषण करते हुए हमने सूरदास कृत अनेक नवीन पद एकत्रित किये हैं । ये पद सूरसागर की मुद्रित प्रतियों में नहीं हैं, किंतु कीर्तन-संग्रहों में उपलब्ध हैं और इनका गायन वल्लभ संप्रदायी मंदिरों में होता है । इस प्रकार के बाल-लीला संबंधी कुछ पद यहाँ पर सूर-साहित्य के प्रेमियों के विचारार्थ दिये जाते हैं । काव्य की दृष्टि से ये पद प्रस्तुत पुस्तक में संकलित अन्य पदों की कोटि के नहीं हैं, और इनमें मात्रा-वर्ण आदि की न्यूनाधिकता एवं पाठ-दोष भी हैं । कीर्तन-संग्रहों की प्राचीन प्रतियों के आधार पर इनकी पाठ-शुद्धि एवं इनकी प्रामाणिकता की परीक्षा होना आवश्यक है ।　　(संपादक)

राग रामकली

झूलौ पालने नंदलाल !

जाउँ बलि-बलि बदन ऊपर, चपल नयन बिसाल ॥
कंठ कठुला केहरी - नख, सुभग मुक्ता - माल ।
गरे हँसुली, कौंधनी कटि, चरन नूपुर - जाल ॥
निकट बैठी जननि झुलवत, भाग मानत भाल ।
लै खिलौना कहत हरि सों, खेलियै मम बाल !
कबहुँ सुत के गाइ गुन-गन, देत कर सों ताल ।
कबहुँ अँगुरी लाय लालहिं, चलन सिखावत चाल ॥
लेउ माखन और मिश्री, खाहु मेरे लाल !
निरखि यह सुख जसोमति कौ, 'सूर' होत निहाल ॥३॥

राग आसावरी

फूलन को पलना झूलत ललना, हरषि जसोमति झुलावै हो ।
गहत डोर कर पाट की, मन प्रभु अति हुलसावै हो ॥
बहु बिधि बिबिध खिलौना लै-लै, गाइ-बजाइ हुलसावै हो ।
नंद हरष मन भयौ निरखि सुख, गोपीजन मंगल गावै हो ॥
रस यह देख देव हरषित भए, 'सूर' चरित जस गावै हो ॥४॥

राग आसावरी

गिरिधरलाल पालनैं झूलैं, जसुमति आप झुलावै ।
देखि-देखि मुख कमल-नैन कौ, बाल-चरित जस गावै ॥
कबहुँक सुरँग खिलौना लै-लै, नाना भाँति खिलावै ।
चुटकी दै-दै लाड़ लड़ावै, और करताल बजावै ॥
पुत्र- सनेह चुचात पयोधर, आनंद उर न समावै ।
निरखौ नंद महर दोउ ढोटा, 'सूरदास' हुलरावै ॥५॥

राग रामकली

जसुमति मदनगुपाल झुलावति ।

देखति सैन गति त्रिभुवन कंपन, सिव-बिरंचि डर पावत ॥
स्याम अलक आलस अति लोचन, उभय पलक मिलि आवत ।
जनु रवि गति संकोचत कमल जुग, निसि अलि उड़न न पावत ॥
सांस-सांसि सिसुताई प्रगट करि, सिसु पद मांहि आवत ।
नासा निसिदिन करि गति-किरना, त्रिबलि-संचार नसावत ॥
कर सिर पर धरि स्याम मनोहर, उपर अति छबि पावत ।
'सूरदास' मानौ पन्नग - पति, प्रभु ऊपर फन छावत ॥६॥

राग बिलावल

पालनैं झुलवत सुंदर स्याम ।
नख-सिख लौं सिंगार सु सोहत, मोहत कोटिक काम ॥
देखन कों जुरि आईं सबै मिलि सुंदर ब्रज की बाम ।
'सूरदास' प्रभु झूलत पलना, झुलवत हैं ब्रज-भाम ॥७॥

राग आसावरी

दिव्य कनिक कौ बन्यौ पालनौ, झूलत हैं ललना ।
फूलन के फोंदना दीने हैं, लटकाय मनोहर पलना ॥
जसोमति हरषि झुलावति ही, नंदराय - मन मगना ।
परम हुलास भयौ गोपिन-मन, निरखि सुरपुष्प बरसना ॥
फूलन के खंभ, फूलन की डांड़ी, फूलन तव आतन ।
'सूरदास' यह छवि निरखत ही, वारत हैं मुक्ता-मन ॥८॥

राग रामकली

पलना झूलौ, मेरे लालन प्यारे !
मुसिकन की बलिहारी हौं, तिल-तिल हट न करौ जु दुलारे ॥
काजर हाथ भरौ जिन मोहन ! हैं नैना रतनारे ।
सिर कुलही, पहिराय पैंजनी, तहीं जाहु, जहाँ नंद बबा रे ॥
यह विनोद धरनीधर निरखत, मात-पिता बलभद्र ददा रे ।
सुर, नर, मुनि सब कौतिक भूले, देखन कों तहाँ 'सूर' हँकारे ॥९॥

राग आसावरी

बैठी रानी जसोमति लाल झुलावै ।
सीस कुलही, गरु मोतिन - माला । छँगन - मँगन मेरे नैन-बिसाला ॥
नेति-नेति निगम जाहि भाखैं । सो जसुमति कौ पय-पान चाखैं ॥
चितै दृष्टि मन अति सचु पावै । भाल कपोल दिठौना लावै ॥
ब्रज मैं नहिं कोउ बड़ भागिन ऐसी । 'सूर' प्रभु की मैया जैसी ॥१०॥

नजर—

राग आसावरी

काहू जोगिया की नजर लागी, मेरौ बारौ कान्ह रोवै ।
घर - घर हाथ दिखावै जसोदा, दूध पीवै नहिं सोवै ॥
चार डाँड़ी सरल सुंदर, पालनैं झुलावै ।
पालनैं नहीं सोवै मोहन, गोद लिऐं हुलरावै ॥
मेरी गली जिन बोलै रे जोगी ! अलख-अलख कहि आवै
राई-लौन उतारै जसोदा, 'सूर' प्रभु कों सुहावै ॥११॥

राग मारू

चल रे जोगी ! नंद - भवन में, जसुमति तोय बुलावै ।
लटकत - लटकत संकर आए, मन में मोद बढ़ावै ॥
नंद - भवन में आयौ जोगी, राई - लौन कर लीनौ ।
वार - फेर लाला के ऊपर, हाथ सीस पै दीनौ ॥
व्यथा भई सब दूर बदन की, किलकि उठे नंदलाल ।
खुसी भई नँद जू की रानी, दीनीं मोतियन-माल ॥
रहि रे जोगी ! नंद - भवन में, ब्रज में बासौ कीजै ।
जब-जब मेरौ लाला रोवै, तब-तब दरसन दीजै ॥
तुम तौ जोगी परम मनोहर, तुमकौं वेद बखानै ।
बूढ़ौ बाबू नाम हमारौ, 'सूर' स्याम मोहिं जानै ॥१२॥

पाँवों चलना—

राग गौरी

खेलत कान्ह कनक-आँगन ।
निज प्रतिबिंब बिलोकि किलकि कै, धावत पकरन कौं परछाँइन ॥
पकरन धावत स्रमित होत, तब आवत उलटि लाल तिहिं ठाँइन ।
'सूरदास' प्रभु की यह लीला, निरखत जसुमति हँसि मुसिकाइन ॥१३॥

राग धनाश्री

पैंजनी पग मनोहर ।
चलत स्याम बाजत बाजन, निरखि विनोद मगन मोहे सुर ॥
अति मन मुदित जसोदा जननी, पाछैं फिरति गहाय अँगुरि-कर ।
मनौ धेनु तृन चारि बच्छ हित, प्रेम पुलकि पय स्रवत पयोधर ॥
कुंडल लोल कपोल बिराजत, लर लटकनी लटुरिया भ्रू पर ।
'सूरदास' अवलोकत यौ सुख, झलकत बाल गोपाल जाके घर ॥१४॥

राग रामकली

रुनक-झुनक बजत पग पैंजनी ।
[illegible] के नग जगमगत, चित्र-चित्र जटित कोटिक मनी ॥
उठत तान तरंग, छिन - छिन जनौ राग - रागनी ।
धरत पग डगमगात, आँगन चलत त्रिभुवन - धनी ॥
[illegible] भाल ललाट सोभा, जात नहिं गनी ।
मानौ [illegible] [illegible] [illegible], मनौ बालक - फनी ॥
निरखि [illegible] किसोर, जसुमति होत आनँद घनी ।
'सूर' प्रभु पर वारि डारौं, कोटि मनमथ - अनी ॥१५॥

राग बिलावल

गिरिधर डोलत पाइन-पाइन ।
अंगुरी गहै नंद बाबा की, घुटुरुवन के चाइन ॥
लटपटाइ पग धरत अटपटे, जसुमति लेत बलाइन ।
कठुला कंठ बाघनख राजत, अंग-अंग सुखदाइन ॥
यह सुख ब्रह्मादिक कों दुर्लभ, जो पीवत सत आइन ।
सो सुख 'सूर' स्याम कहाँ पैयत, जो सुख ब्रज की गाइन ॥१६॥

माटी-भक्षण—

राग रामकली

तैं माटी क्यों खाई रे मोहन ?
ठाड़े कहत गोप-बालक सब, जैहैं तेरे गोह न ॥
मुकरि गए, मैं कछु जिन देखी, भूठेंई आनि लगाई ।
दै परतीति पसारि बदन तब, सब बसुधा दरसाई ॥
चकित भई जसुमति जिय डरपी, मन माया उपजाई ।
'सूरदास' प्रभु बाल - केलि - रस मोहौं आई पिराई ॥१७॥

राग रामकली

उगलौ प्यारे बाल-गोपाल माटी ।
बार-बार अनरुचि उपजावत, जसुमति हाथ लिए साँटी ॥
महतारी कौ कह्यौ न मानत, कपट चतुरई ठाटी ।
बदन उघारि दिखायौ, अपने नाटक की परिपाटी ॥
बड़ी बार भई लोचन मूँदैं, भरम - जवनिका फाटी ।
'सूरदास' नँदरानी थकित भई, कहत न मीठी-खाटी ॥१८॥

बाल-शोभा—

राग सारंग

देख्यौ री हरि नंगमनंगा ।
जल-सुत-भूषन अंग बिराजत, बसनहीन छबि उठत तरंगा ॥
कहा कहौं अँग-अँग की सोभा, निरखत लज्जित कोटि अनंगा ।
कछु दधि हाथ, कछू मुख माखन, 'सूर' हँसत ब्रज जुवतिन संगा ॥१९॥

राग सारंग

देखौ सखी ! राजत हैं नंदलाल ।
सीस किरीट, स्रवन मनि-कुंडल, उर गुंजा-बनमाल ॥
बागौ सरस केसरी सोहै, फेंटा हु छोर रसाल ।
सुरति केलि रस मुरली बजावत, चंचल नयन बिसाल ॥
आस-पास सब ग्वाल-मंडली, मध्य नायक ब्रजपाल ।
'सूरदास' प्रभु यह सुख बाढ़्यौ, बड़े गोप के बाल ॥२०॥

माता का प्यार— राग बिलावल

बलि-बलि जाउँ, लला इन बोलन की ।
घूँघरवारी लट लटकैं, छवि कुंडल लोल कपोलन की ॥
दंत की पंगति कुंदकली, अधरामृत बोलन खोलन की ।
चपला चमकै, तन बीजु - छटा, उर मोतिन-माल अमोलन की ॥
झुनक-झुनक पाँय पैंजनी बाजैं, चलन चटक इन डोलन की ।
'सूरदास' प्रभु करि न्योछावर, लटकैं भुजा गल मेलन की ॥२१॥

राग गौरी

मेरौ माई स्याम मनोहर जीवन ।
निरख नयन भूले तें बदन-छवि, मधुर हँसत पय-पीवन ॥
कुंतल कुटिल, मकर कुंडल, भुव-नयन बिलोकनि बंका ।
बिधु-सुता तें निकसि, नयौ ससि राजत मनौ मृगंका ॥
सोभित सुभग मयूर - चंद्रिका, नील-नलिन-तनु-स्याम ।
मानहु छत्र नमित इंद्रधनु, सुभग मेघ अभिराम ॥
परम कुसल कोविद लीला लखि, मुसकनि मन हरि लेत ।
कृपा - कटाच्छ कमल कर फेरत, 'सूर' जननि सुख देत ॥२२॥

बालकृष्ण की माँग— राग मल्लार

ल्याय दि दैरी मैया ! मोकों, एक गईया श्याम की ।
नंद-नंदन. मन मुदित जसोदा, सुनि-सुनि बतियाँ स्याम की ॥
नव गौआ, बाछौंड़ी, मैया, बलिहारी या नाम की ।
माखन मागत मीनी रोटी, भुरकि सो मेरे काम की ॥
घर-घर ब्रज, घर-घर गोपीजन, ब्रज समीप नँदगाम की ।
सुर नर मुनि. इन्द्रसन. मुख निरखत, जय मेरन 'सूर' स्याम की ॥२३॥

... the
... be
... of rents,
... axes. That
... n expanding
... ding economy,
... dripad said with
... tion the purchas-
... the people should
... herwise, any increase
... on was bound to lead to
... had happened now in the

... other essential point for com-
... ing "the deepening economic crisis in the country" was, said Mr Nambudripad, "democratization of the State itself" which meant freeing the people from corruption and nepotism. Without the elimination of "corrupt bureaucracy," no big projects could be executed efficiently and successfully. For instance, the Communist Party had no quarrel with the objectives of community projects but its opposition to them arose from the fact that execution of projects had been entrusted to "corrupt bureaucracy."

Mr Nambudripad said the Communist Congress was of the view that unless the fundamental basis of the Five-Year Plan was revised, the economic crisis in the country was bound to worsen. He, however, added that though the Communist Party would carry on a campaign among the people that the Government's economic policy was wrong, there might be certain steps taken within that policy which the Party might be able to support. In short, the Party would adopt the same line of attitude on questions of economic policy as on foreign policy, namely, judging specific issues on merits and supporting them. These specific issues which the Party would support, he said, were far less numerous in the internal economic policy of the Government than in its foreign policy.

DEMOCRATIC FRONTS

Speaking about the formation of
... d Democratic Fronts in differ-
... tates, the Communist leader
... e was a great deal of dis-
... ut this in the Congress.
... on, he said, mainly
... concrete character of
... e experience that
... in this matter
... ear was utiliz-
... ggesting im-
... various
... Fronts,
... the
... rty

... ns 29 crore
the succee...
dropped t...
crores.

The simp...
ing proced...
by the tra...

The re...
certain ite...
gaonkar C...
estimated t...
engineering...
try betwee...
was in lin...
Industrial c...

BALAN...

The Gov...
tain a satis...
ments posi...
ed. For th...
the value ...
Rs 255 cr...
said to ha...
figure *plus*...
visible retu...
leases. The...
the period ...
was at the ...
per month...
the same...
41.25 crores...
period, the...
count work...
crores, wh...
counterbala...
other sourc...

A Dutch ...
I.C.E.F. tha...
an iron lu...
for immedi...
part of the...
quest.

V...
F...

PARIS, J...
Minh Com...
was yesterd...
pleting the...
for an atta...
Phu, the Fr...
invasion ro...

The Viet-...
on the hill...
from the F...
yesterday b...
313th Divisi...

These uni...
Tonking-Lao...
has also br...
Bien Phu s...
units.

The Fren...
machine-gu...
napalm bo...
centrations...